अध्याय १७

महाप्रभु की वृन्दावन यात्रा

श्रील भक्तिविनोद ठाकुर ने अपने *अमृत-प्रवाह-भाष्य* में इस अध्याय का सारांश इस प्रकार दिया है। "श्री जगन्नाथ रथयात्रा में भाग लेने के बाद श्री चैतन्य महाप्रभु ने वृन्दावन जाने का निश्चय किया। श्री रामानन्द राय तथा स्वरूप दामोदर गोस्वामी ने श्री चैतन्य महाप्रभु की सेवा करने के लिए बलभद्र भट्टाचार्य नामक ब्राह्मण को चुना। महाप्रभु सूर्योदय होने के पूर्व ही कटक नगर के लिए चल पड़े। कटक के उत्तर में वे एक घने जंगल में प्रविष्ट हुए, जहाँ उनकी भेंट अनेक बाघों तथा हाथियों से हुई, जिन्हें उन्होंने हरे कृष्ण महामन्त्र के कीर्तन में लगाया। जब भी वे किसी गाँव में जाते, वे भिक्षा माँगकर कुछ चावल तथा शाक-सब्जियाँ प्राप्त कर लेते। यदि कोई गाँव मार्ग में नहीं पड़ता था, तो खाने के लिए उनके पास जो भी चावल बचा रहता था, वे उसे पकाते और जंगल से शाक-सब्जियाँ एकत्र कर लाते। श्री चैतन्य महाप्रभु बलभद्र भट्टाचार्य के व्यवहार से अत्यन्त प्रसन्न थे।

इस तरह महाप्रभु झारखंड के जंगलों को पार करते हुए अन्त में वाराणसी पहुँचे। वाराणसी में मणिकर्णिका घाट पर स्नान करने के बाद वे तपन मिश्र से मिले, जो उन्हें अपने निवासस्थान ले गये और आदरपूर्वक उन्हें रहने के लिए सुखदायक स्थान दिया। वाराणसी में महाप्रभु के पुराने मित्र वैद्य चन्द्रशेखर ने भी उनकी सेवा की। श्री चैतन्य महाप्रभु के व्यवहार को देखकर एक महाराष्ट्रीय ब्राह्मण ने मायावादी संन्यासियों के प्रमुख प्रकाशानन्द सरस्वती को सूचना दी। प्रकाशानन्द ने महाप्रभु पर अनेक आरोप लगाये। इससे उस ब्राह्मण को अत्यधिक खेद हुआ और उसने यह बात महाप्रभु को बताई तथा उनसे पूछा

कि मायावादी संन्यासी कृष्ण का पवित्र नाम क्यों नहीं लेते। श्री चैतन्य महाप्रभु ने उत्तर दिया कि वे सब अपराधी हैं, अत: किसी को भी उनकी संगति नहीं करनी चाहिए। इस तरह महाप्रभु ने उस ब्राह्मण को अपना आशीर्वाद दिया।

इसके बाद महाप्रभु प्रयाग तथा मथुरा से होकर निकले और उन्होंने माधवेन्द्र पुरी के शिष्य सानोडिया ब्राह्मण के घर भोजन किया। उस ब्राह्मण के घर भोजन स्वीकार करके उन्होंने उसे आशीर्वाद दिया और उसके बाद उन्होंने वृन्दावन के बारहों वन देखे और वे अत्यधिक प्रेम से आनन्दित हो उठे। वृन्दावन में यात्रा करते समय उन्होंने तोतों तथा अन्य पक्षियों को चहचहाते सुना।

गच्छन्वृन्दावनं गौरो व्याघ्रेभैण-खगान्वने ।
प्रेमोन्मत्तान्सहोन्नृत्यान्विदधे कृष्ण-जल्पिनः ॥ १ ॥

गच्छन्वृन्दावनं गौरो व्याघ्रेभैण-खगान्वने ।
प्रेमोन्मत्तान्सहोन्नृत्यान्विदधे कृष्ण-जल्पिनः ॥ १ ॥

गच्छन्—जाते समय; **वृन्दावनम्**—वृन्दावन धाम को; **गौरः**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **व्याघ्र**—बाघों; **इभ**—हाथियों; **एण**—हिरनों; **खगान्**—और पक्षियों को; **वने**—वन में; **प्रेम-उन्मत्तान्**—प्रेमभाव से पागल; **सह**—साथ; **उन्नृत्यान्**—नृत्य; **विदधे**—बना दिया; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण का नाम; **जल्पिनः**—जपकर (कीर्तन करके)।

अनुवाद

वृन्दावन जाते हुए श्री चैतन्य महाप्रभु झारखंड के जंगलों से होकर गुजरे और उन्होंने सारे बाघों, हाथियों, हिरनों तथा पक्षियों को हरे कृष्ण महामन्त्र का कीर्तन और नृत्य करने के लिए प्रेरित किया। इस तरह ये सारे पशु प्रेमभाव से उन्मत्त हो उठे।

जय जय गौरचन्द्र जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैत-चन्द्र जय गौर-भक्त-वृन्द ॥ २ ॥

जय जय गौरचन्द्र जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैत-चन्द्र जय गौर-भक्त-वृन्द ॥ २ ॥

जय जय—जय हो; **गौरचन्द्र**—श्री चैतन्य महाप्रभु की; **जय**—जय हो; **नित्यानन्द**—नित्यानन्द प्रभु की; **जय**—जय हो; **अद्वैत-चन्द्र**—अद्वैत आचार्य की; **जय**—जय हो; **गौर-भक्त-वृन्द**—चैतन्य महाप्रभु के भक्तों की।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु की जय हो! श्री नित्यानन्द प्रभु की जय हो! अद्वैतचन्द्र की जय हो! महाप्रभु के सारे भक्तों की जय हो!

শরত্কাল হৈল, প্রভুর চলিতে হৈল মতি ।
রামানন্দ-স্বরূপ-সঙ্গে নিভৃতে যুকতি ॥৩॥

शरत्काल हैल, प्रभुर चलिते हैल मति ।
रामानन्द-स्वरूप-सङ्गे निभृते युकति ॥ ३॥

शरत्-काल हैल—शरद ऋतु आ गई; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु की; **चलिते**—चलने की; **हैल**—हो गई; **मति**—इच्छा; **रामानन्द**—रामानन्द राय; **स्वरूप**—स्वरूप दामोदर; **सङ्गे**—के साथ; **निभृते**—एकान्त में; **युकति**—परामर्श किया।

अनुवाद

जब शरद ऋतु आई, तो श्री चैतन्य महाप्रभु ने वृन्दावन जाने का निश्चय किया। उन्होंने एकान्त में रामानन्द राय तथा स्वरूप दामोदर गोस्वामी से परामर्श किया।

"মোর সহায় কর যদি, তুমি-দুই জন ।
তবে আমি যাঞা দেখি শ্রী-বৃন্দাবন ॥৪॥

"मोर सहाय कर यदि, तुमि-दुइ जन ।
तबे आमि याञा देखि श्री-वृन्दावन ॥४॥

मोर—मेरी; **सहाय**—सहायता; **कर**—करो; **यदि**—यदि; **तुमि**—तुम; **दुइ जन**—दोनों व्यक्ति; **तबे**—तब; **आमि**—मैं; **याञा**—जाकर; **देखि**—दर्शन करूँगा; **श्री-वृन्दावन**—श्री वृन्दावन धाम।

अनुवाद

महाप्रभु ने रामानन्द राय तथा स्वरूप दामोदर गोस्वामी से अनुरोध किया कि वे उन्हें वृन्दावन जाने में सहायता करें।

রাত্র্যে উঠি' বন-পথে পলাঞা যাব ।
একাকী যাইব, কাহোঁ সঙ্গে না লইব ॥৫॥

রাত্র্যে উঠি' বন-পথে পলাঞা যাব ।
একাকী যাইব, কাহোঁ সঙ্গে না লইব ॥৫॥

রাত্র্যে উঠি'—রাত को उठकर; **বন-পথে**—वन के रास्ते सड़क पर; **পলাঞা যাব**—मैं चुपके से चला जाऊँगा; **একাকী যাইব**—मैं अकेला जाऊँगा; **কাহোঁ**—किसी को भी; **সঙ্গে**—अपने साथ; **না লইব**—मैं नहीं लूँगा।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा, "मैं भोर के समय यात्रा आरम्भ करूँगा और जंगल के मार्ग में अलक्षित होकर अकेले जाऊँगा। मैं अपने साथ किसी को भी नहीं लूँगा।

কেহ যদি সঙ্গ লইতে পাছে উঠি' ধায় ।
সবারে রাখিবা, যেন কেহ নাহি যায় ॥৬॥

কেহ যদি সঙ্গ লইতে পাছে উঠি' ধায় ।
সবারে রাখিবা, যেন কেহ নাহি যায় ॥৬॥

কেহ—कोई; **যদি**—यदि; **সঙ্গ লইতে**—साथ जाना चाहे; **পাছে**—पीछे; **উঠি'**—उठकर; **ধায়**—दौड़ता है; **সবারে**—हर व्यक्ति को; **রাখিবা**—कृपया रोक लेना; **যেন**—ताकि; **কেহ**—कोई भी; **নাহি যায়**—न जाय।

अनुवाद

"यदि कोई मेरे पीछे आना भी चाहे, तो उसे आप लोग रोक लें। मैं नहीं चाहता कि कोई भी मेरे साथ जाये।

প্রসন্ন হঞা আজ্ঞা দিবা, না মানিবা 'দুঃখ' ।
তোমা-সবার 'সুখে' পথে হবে মোর 'সুখ''' ॥৭॥

প্রসন্ন হঞা আজ্ঞা দিবা, না মানিবা 'দুঃখ' ।
তোমা-সবার 'সুখে' পথে হবে মোর 'সুখ''' ॥৭॥

প্রসন্ন হঞা—प्रसन्न होकर; **আজ্ঞা দিবা**—आज्ञा दो; **না**—न; **মানিবা দুঃখ**—होना

अप्रसन्न; **तोमा-सबार**—तुम सबकी; **सुखे**—प्रसन्नता से; **पथे**—रास्ते में; **हबे**—होगी; **मोर**—मुझे; **सुख**—प्रसन्नता।

अनुवाद

"तुम लोग कृपया प्रसन्नतापूर्वक मुझे आज्ञा दो और दुःखी मत हो। यदि तुम लोग सुखी होंगे, तो मैं वृन्दावन को प्रस्थान करते हुए सुखी हूँगा।"

दुइ-जन कहे,—'तुमि ईश्वर 'स्वतन्त्र' ।
येइ इच्छा, सेइ करिबा, नह 'परतन्त्र' ॥८॥

दुइ-जन कहे,—'तुमि ईश्वर 'स्वतन्त्र' ।
येइ इच्छा, सेइ करिबा, नह 'परतन्त्र' ॥८॥

दुइ-जन कहे—जब दोनों व्यक्तियों ने उत्तर दिया; **तुमि**—आप; **ईश्वर**—पूर्ण पुरूषोत्तम भगवान्; **स्व-तन्त्र**—पूर्णतया स्वतन्त्र; **येइ इच्छा**—जो आपकी इच्छा हो; **सेइ**—वह; **करिबा**—आप करेंगे; **नह**—आप नहीं हैं; **पर-तन्त्र**—किसी पर निर्भर।

अनुवाद

यह सुनकर रामानन्द राय तथा स्वरूप दामोदर गोस्वामी ने कहा, "हे प्रभु, आप पूर्णतया स्वतन्त्र हैं। चूँकि आप किसी पर आश्रित नहीं हैं, अतएव आपकी जो इच्छा होगी आप वही करेंगे।

किन्तु आमा-दुँहार शुन एक निवेदने ।
'तोमार सुखे आमार सुख'—कहिला आपने ॥९॥

किन्तु आमा-दुँहार शुन एक निवेदने ।
'तोमार सुखे आमार सुख'—कहिला आपने ॥९॥

किन्तु—किन्तु; **आमा-दुँहार**—हम दोनों का; **शुन**—कृपया सुनो; **एक निवेदने**—एक निवेदन; **तोमार सुखे**—आपकी प्रसन्नता में; **आमार सुख**—हमारी प्रसन्नता है; **कहिला**—आपने पहले कहा है; **आपने**—स्वयं।

अनुवाद

"हे प्रभु, कृपया हमारी एक विनती सुनें। आपने पहले ही कहा है कि हमारे सुख से आपको सुख मिलेगा। यह आपका अपना कथन है।

आमा-दुँहार मने तबे बड़ 'सुख' हय ।
एक निवेदन यदि धर, दयामय ॥ १० ॥

आमा-दुँहार मने तबे बड़ 'सुख' हय ।
एक निवेदन यदि धर, दयामय ॥ १० ॥

आमा-दुँहार—हम दोनों के; **मने**—मन में; **तबे**—अतः; **बड़**—बहुत; **सुख हय**—सुख होगा; **एक निवेदन**—एक निवेदन; **यदि**—यदि; **धर**—आप मानें; **दया-मय**—कृपालु प्रभु।

अनुवाद

"यदि आप हमारी केवल एक विनती मान लें, तो हम अत्यधिक सुखी होंगे।

'उत्तम ब्राह्मण' एक सङ्गे अवश्य चाहि ।
भिक्षा करि' भिक्षा दिबे, याबे पात्र बहि' ॥ ११ ॥

'उत्तम ब्राह्मण' एक सङ्गे अवश्य चाहि ।
भिक्षा करि' भिक्षा दिबे, याबे पात्र बहि' ॥ ११ ॥

उत्तम ब्राह्मण—उत्तम ब्राह्मण; **एक**—एक; **सङ्गे**—संग; **अवश्य**—अवश्य; **चाहि**—हम चाहते हैं; **भिक्षा करि'**—भिक्षा माँगकर आपके लिए; **भिक्षा दिबे**—आपको भोजन दे; **याबे**—जाए; **पात्र बहि'**—आपका जलपात्र उठाकर।

अनुवाद

"हमारे प्रभु! आप अपने साथ एक उत्तम ब्राह्मण अवश्य ले लें। वह आपके लिए भिक्षा लायेगा, पकायेगा, आपको प्रसाद देगा और आपकी यात्रा के समय आपका जलपात्र उठायेगा।

वन-पथे याइते नाहि 'भोज्यान्न'-ब्राह्मण ।
आज्ञा कर,—सङ्गे चलुक विप्र एक-जन' ॥ १२ ॥

वन-पथे याइते नाहि 'भोज्यान्न'-ब्राह्मण ।
आज्ञा कर,—सङ्गे चलुक विप्र एक-जन' ॥ १२ ॥

वन-पथे—वन के मार्ग पर; **याइते**—जाते हुए; **नाहि**—नहीं है; **भोज्य-अन्न-ब्राह्मण**—ऐसा ब्राह्मण जिसका भोजन स्वीकार किया जा सके; **आज्ञा कर**—कृपया आज्ञा दीजिये; **सङ्गे**—साथ; **चलुक**—चल सकता है; **विप्र**—ब्राह्मण; **एक-जन**—एक व्यक्ति।

अनुवाद

"जब आप जंगल से होकर यात्रा करेंगे, तो आपको ऐसा कोई ब्राह्मण नहीं मिल सकेगा, जिसके यहाँ आप भोजन कर सकें। अतएव आप कृपया आज्ञा दें, जिससे आपके साथ कम-से-कम एक शुद्ध ब्राह्मण जा सके।"

प्रभु कहे,—निज-सङ्गी काँहो ना लइब ।
एक-जने निले, आनेर मने दुःख हइब ॥ १३॥

प्रभु कहे,—निज-सङ्गी काँहो ना लइब ।
एक-जने निले, आनेर मने दुःख हइब ॥ १३॥

प्रभु कहे—श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा; **निज-सङ्गी**—अपने साथियों में से; **काँहो**—किसी को भी; **ना**—नहीं; **लइब**—मैं ले जाऊँगा; **एक-जने निले**—अगर मैं किसी को ले जाऊँ; **आनेर मने**—दूसरों के मन में; **दुःख हइब**—दुःख होगा।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा, "मैं अपने साथ अपने किसी भी संगी को नहीं ले जाऊँगा, क्योंकि यदि मैं किसी को भी चुनूँगा, तो अन्य सभी लोग दुःखी होंगे।

नूतन सङ्गी हइबेक,—स्निग्ध याँर मन ।
ऐछे यबे पाइ, तबे लइ 'एक' जन ॥ १४॥

नूतन सङ्गी हइबेक,—स्निग्ध याँर मन ।
ऐछे यबे पाइ, तबे लइ 'एक' जन ॥ १४॥

नूतन—नया; **सङ्गी**—साथी; **ह-इबेक**—होना चाहिए; **स्निग्ध**—अत्यन्त शान्त; **याँर**—जिसका; **मन**—मन; **ऐछे**—ऐसा; **यबे**—यदि; **पाइ**—मैं पा सकूँ; **तबे**—तो; **लइ**—मैं ले लूँगा; **एक जन**—एक व्यक्ति को।

अनुवाद

"ऐसा व्यक्ति नया ही होना चाहिए। उसे शान्तचित्त होना चाहिए। यदि मुझे ऐसा व्यक्ति मिल सके, तो मैं उसे अपने साथ लेने के लिए तैयार हूँ।"

तात्पर्य

इससे पूर्व जब श्री चैतन्य महाप्रभु दक्षिण भारत गये थे, तब वे अपने साथ काला कृष्णदास नामक एक ब्राह्मण को लेते गये थे। किन्तु वह एक स्त्री के पाश में फँस गया और चैतन्य महाप्रभु को उसे बंजारों के चंगुल से छुड़ाने में कष्ट सहन करना पड़ा था। इसीलिए महाप्रभु यहाँ कहते हैं कि उन्हें कोई नया व्यक्ति चाहिए, जो शान्त चित्त वाला हो। जिसका चित्त शान्त नहीं होता वह कई वेगों में, विशेषतया कामवासना के प्रभाव में आ जाता है, भले ही वह महाप्रभु के ही संग में क्यों न रहे। ऐसा व्यक्ति का स्त्रियों के वशीभूत हो जायेगा और परम भगवान् के संग रहते हुए भी पतित हो जायेगा। माया इतनी प्रबल है कि जब तक मनुष्य उसके चंगुल में न पड़ने का संकल्प नहीं करता, तब तक उसे भगवान् भी संरक्षण प्रदान नहीं कर सकते। परम भगवान् तथा उनका प्रतिनिधि सदैव संरक्षण देना चाहते हैं, किन्तु ऐसे व्यक्ति को उनके व्यक्तिगत संग का लाभ उठाना चाहिए। जो व्यक्ति पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् या उनके प्रतिनिधि को सामान्य व्यक्ति मानता है, वह अवश्य ही पतित हो जाता है। अतः महाप्रभु काला कृष्णदास जैसे व्यक्ति को अपने साथ नहीं ले जाना चाह रहे थे। वे ऐसे व्यक्ति को चाहते थे, जो दृढ़-संकल्प, शान्तचित्त तथा अविचल रहने वाला हो।

স্বরূপ কহে,—এই বলভদ্র-ভট্টাচার্য ।
তোমাতে সু-স্নিগ্ধ বড়, পণ্ডিত, সাধু, আর্য ॥১৫॥

स्वरूप कहे,—एइ बलभद्र-भट्टाचार्य्य ।
तोमाते सु-स्निग्ध बड़, पण्डित, साधु, आर्य्य ॥ १५ ॥

स्वरूप कहे—स्वरूप दामोदर गोस्वामी ने कहा; **एइ**—यह; **बलभद्र-भट्टाचार्य्य**—भलभद्र भट्टाचार्य; **तोमाते**—आपके प्रति; **सु-स्निग्ध**—स्नेहिल; **बड़**—बड़ा; **पण्डित**—विद्वान; **साधु**—साधु; **आर्य्य**—आध्यात्मिक चेतना में उन्नत।

अनुवाद

तब स्वरूप दामोदर ने कहा, "यह बलभद्र भट्टाचार्य है। इसे आपके प्रति अत्यधिक अनुराग है। यह सच्चरित्र, विद्वान तथा आध्यात्मिक चेतना में उन्नत है।

तात्पर्य

श्री चैतन्य महाप्रभु को नया व्यक्ति चाहिए था, काला कृष्णदास जैसा व्यक्ति नहीं जो स्त्रियों के प्रति आसक्त हो जाए। इसलिए स्वरूप दामोदर ने तुरन्त एक नये ब्राह्मण किया, जिसका नाम बलभद्र भट्टाचार्य था। श्री स्वरूप दामोदर गोस्वामी ने इस व्यक्ति की अच्छी तरह परीक्षा की थी और यह देख लिया था कि श्री चैतन्य महाप्रभु के प्रति उसमें बहुत प्रेम था। न केवल महाप्रभु के प्रति उसका प्रेम था, अपितु वह विद्वान तथा सच्चरित्र भी था। वह कपट स्वभावयुक्त नहीं था और वह कृष्णभावना में उन्नत था। बंगाली कहावत है—*अति भक्ति चोरेर लक्षण*—"अत्यधिक भक्ति चोर का लक्षण है।" जो व्यक्ति अपने आपको बहुत बड़ा भक्त मानता है, किन्तु मन में कुछ दूसरा ही सोचता रहता है, वह कपटी स्वभाव का है। जो कपटी स्वभाव का नहीं है, वह साधु है। स्वरूप दामोदर ने तुरन्त संकेत किया कि महाप्रभु के साथ जाने के लिए बलभद्र भट्टाचार्य सर्वथा उपयुक्त था, क्योंकि वह विद्वान तथा सरल था और श्रीकृष्ण चैतन्य महाप्रभु के प्रति अत्यधिक प्रेम रखता था। वह कृष्णभावनामृत में उन्नत भी था, इसलिए उसे ही महप्रभु के निजी दास के रूप में जाने के लिए उपयुक्त समझा गया।

श्लोक १४ तथा १५ में *स्निग्ध* ("अत्यन्त शान्त") तथा *सु-स्निग्ध* ("स्नेहिल") शब्द आये हैं। इनका प्रयोग *श्रीमद्भागवत* (१.१.८) में भी हुआ है—*ब्रूयुः स्निग्धस्य शिष्यस्य गुरवो गुह्यमप्युत*—"जिस शिष्य में गुरु के लिए वास्तविक प्रेम होता है, उसे गुरु की कृपा से सारा गुह्य ज्ञान प्राप्त हो जाता है।" श्रील श्रीधर स्वामी की टीका है कि *स्निग्धस्य* का अर्थ *प्रेमवतः* है। जिसमें अपने गुरु के लिए विपुल प्रेम होता है, वह *प्रेमवतः* है।

प्रथमेइ तोमा-सङ्गे आइला गौड़ हैते ।
इँहार इच्छा आछे 'सर्व-तीर्थ' करिते ॥ १६॥

प्रथमेइ तोमा-सङ्गे आइला गौड़ हैते ।
इँहार इच्छा आछे 'सर्व-तीर्थ' करिते ॥ १६ ॥

प्रथमेइ—आरम्भ में; **तोमा-सङ्गे**—आपके साथ; **आइला**—आया; **गौड़ हैते**—बंगाल

से; **इँहार इच्छा**—उसकी इच्छा; **आछे**—है; **सर्व-तीर्थ**—सभी तीर्थस्थानों में; **करिते**—जाकर देखने की।

अनुवाद

"प्रारम्भ में वह बंगाल से आपके साथ आया था। उसकी इच्छा है कि वह समस्त तीर्थस्थानों का दर्शन करे।

इँहार सङ्गे आछे विप्र एक 'भृत्य' ।
इँहो पथे करिबेन सेवा-भिक्षा-कृत्य ॥ १७॥

इँहार सङ्गे आछे विप्र एक 'भृत्य' ।
इँहो पथे करिबेन सेवा-भिक्षा-कृत्य ॥ १७॥

इँहार सङ्गे—उसके साथ; **आछे**—है; **विप्र**—ब्राह्मण; **एक**—एक; **भृत्य**—सेवक; **इँहो**—यह व्यक्ति; **पथे**—मार्ग में; **करिबेन**—करेगा; **सेवा**—सेवा; **भिक्षा-कृत्य**—और पकाने की व्यवस्था।

अनुवाद

"इसके अतिरिक्त आप दूसरा ब्राह्मण भी ले जाएँ, जो रास्ते में सेवक का काम कर सके और आपकी भोजन-व्यवस्था कर सके।

इँहारे सङ्गे लह यदि, सबार हय 'सुख' ।
वन-पथे याइते तोमार नहिबे कोन 'दुःख' ॥ १८॥

इँहारे सङ्गे लह यदि, सबार हय 'सुख' ।
वन-पथे याइते तोमार नहिबे कोन 'दुःख' ॥ १८॥

इँहारे—उसको; **सङ्गे**—साथ लेना; **लह**—आप स्वीकार करें; **यदि**—यदि; **सबार हय सुख**—हर व्यक्ति प्रसन्न होगा; **वन-पथे**—जंगल के मार्ग पर; **याइते**—जाने में; **तोमार**—आपको; **नहिबे**—नहीं होगी; **कोन**—कोई; **दुःख**—कठिनाई।

अनुवाद

"यदि आप उसे भी साथ ले सकें, तो हम अत्यन्त सुखी होंगे। यदि आपके साथ जंगल के मार्ग में दो लोग रहेंगे, तो निश्चित रूप से आपको कोई भी कठिनाई या असुविधा नहीं होगी।

সেই বিপ্র বহি' নিবে বস্ত্রাম্বু-ভাজন ।
ভট্টাচার্য ভিক্ষা দিবে করি' ভিক্ষাটন ॥১৯॥

सेइ विप्र वहि' निबे वस्त्राम्बु-भाजन ।
भट्टाचार्य्य भिक्षा दिबे करि' भिक्षाटन ॥ १९ ॥

सेइ विप्र—दूसरा ब्राह्मण; **वहि' निबे**—उठायेगा; **वस्त्र-अम्बु-भाजन**—वस्त्र तथा जलपात्र; **भट्टाचार्य्य**—बलभद्र भट्टाचार्य; **भिक्षा दिबे**—भोजन पकाने का प्रबन्ध करेगा; **करि'**—करके; **भिक्षा-अटन**—भिक्षा माँगना ।

अनुवाद

"दूसरा ब्राह्मण आपके वस्त्र तथा जलपात्र लिए रहेगा और बलभद्र भट्टाचार्य भिक्षा माँगकर आपके लिए भोजन पकायेगा।"

তাঁহার বচন প্রভু অঙ্গীকার কৈল ।
বলভদ্র-ভট্টাচার্যে সঙ্গে করি' নিল ॥২০॥

ताँहार वचन प्रभु अङ्गीकार कैल ।
बलभद्र-भट्टाचार्य्ये सङ्गे करि' निल ॥ २० ॥

ताँहार वचन—उनके वचन; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **अङ्गीकार कैल**—स्वीकार कर लिये; **बलभद्र-भट्टाचार्य्ये**—बलभद्र भट्टाचार्य को; **सङ्गे करि' निल**—अपने साथ ले लिया।

अनुवाद

इस तरह श्री चैतन्य महाप्रभु ने स्वरूप दामोदर पण्डित की बात मान ली और बलभद्र भट्टाचार्य को अपने साथ ले जाना स्वीकार कर लिया।

পূর্ব-রাত্র্যে জগন্নাথ দেখি' 'আজ্ঞা' লঞা ।
শেষ-রাত্রে উঠি' প্রভু চলিলা লুকাঞা ॥২১॥

पूर्व-रात्रे जगन्नाथ देखि' 'आज्ञा' लञा ।
शेष-रात्रे उठि' प्रभु चलिला लुकाञा ॥ २१ ॥

पूर्व-रात्रे—पिछली रात को; **जगन्नाथ देखि'**—भगवान् जगन्नाथ के दर्शन करके; **आज्ञा लञा**—आज्ञा लेकर; **शेष-रात्रे**—रात की समाप्ति के निकट; **उठि'**—उठकर; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **चलिला**—चल पड़े; **लुकाञा**—छुपकर।

अनुवाद

पिछली रात्रि श्री चैतन्य महाप्रभु ने भगवान् जगन्नाथ का दर्शन किया था और उनसे आज्ञा ले ली थी। अब रात्रि समाप्त होने के पूर्व महाप्रभु जगे और तुरन्त चल पड़े। उनको किसीने देखा नहीं।

प्रातः-काले भक्त-गण प्रभु ना देखिया ।
अन्वेषण करि' फिरे व्याकुल हञा ॥२२॥

प्रातः-काले भक्त-गण प्रभु ना देखिया ।
अन्वेषण करि' फिरे व्याकुल हञा ॥ २२ ॥

प्रातः-काले—प्रातः काल; **भक्त-गण**—सभी भक्त; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु को; **ना देखिया**—न देखकर; **अन्वेषण करि'**—ढूंढने लगे; **फिरे**—घूमने लगे; **व्याकुल हञा**—व्याकुल होकर।

अनुवाद

चूँकि महाप्रभु जा चुके थे, अतः जब प्रातःकाल भक्तों ने उन्हें नहीं देखा, तो वे अत्यन्त व्याकुल होकर उनकी खोज करने लगे।

स्वरूप-गोसाञि सबाय कैल निवारण ।
निवृत्त हञा रहे सबे जानि' प्रभुर मन ॥२३॥

स्वरूप-गोसाञि सबाय कैल निवारण ।
निवृत्त हञा रहे सबे जानि' प्रभुर मन ॥ २३ ॥

स्वरूप-गोसाञि—स्वरूप दामोदर गोस्वामी; **सबाय**—सबको; **कैल**—किया; **निवारण**—रोका; **निवृत्त हञा**—संयम करके; **रहे**—रह गये; **सबे**—सब; **जानि'**—जानते हुए; **प्रभुर मन**—श्री चैतन्य महाप्रभु के मन को।

अनुवाद

जब सारे भक्त महाप्रभु की खोज कर रहे थे, तब स्वरूप दामोदर ने उन्हें रोका। तब सारे लोग श्री चैतन्य महाप्रभु के मन की बात जानकर चुप हो गये।

প্রসিদ্ধ পথ ছাড়ি' প্রভু উপপথে চলিলা ।
'কটক' ডাহিনে করি' বনে প্রবেশিলা ॥২৪॥

प्रसिद्ध पथ छाड़ि' प्रभु उपपथे चलिला ।
'कटक' डाहिने करि' वने प्रवेशिला ॥ २४॥

प्रसिद्ध—प्रसिद्ध; **पथ**—मार्ग; **छाड़ि'**—छोड़कर; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **उपपथे**—उपमार्ग से; **चलिला**—चलने लगे; **कटक**—कटक नगर को; **डाहिने**—दाहिनी ओर; **करि'**—रखकर; **वने**—वन में; **प्रवेशिला**—प्रवेश किया।

अनुवाद

महाप्रभु जाने-पहचाने सार्वजनिक मार्ग पर न चलकर उपमार्ग से होकर गये। इस तरह उन्होंने कटक शहर को अपनी दाईं ओर छोड़ते हुए जंगल में प्रवेश किया।

নির্জন-বনে চলে প্রভু কৃষ্ণ-নাম লঞা ।
হস্তি-ব্যাঘ্র পথ ছাড়ে প্রভুরে দেখিয়া ॥২৫॥

निर्जन-वने चले प्रभु कृष्ण-नाम लञा ।
हस्ति-व्याघ्र पथ छाड़े प्रभुरे देखिया ॥ २५॥

निर्जन-वने—एकान्त वन में; **चले**—चलने लगे; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **कृष्ण-नाम लञा**—कृष्ण का पावन नाम लेते हुए; **हस्ति**—हाथियों; **व्याघ्र**—बाघों ने; **पथ छाड़े**—पथ छोड़ दिया; **प्रभुरे**—श्री चैतन्य महाप्रभु को; **देखिया**—देखकर।

अनुवाद

जब महाप्रभु सुनसान जंगल से होकर कृष्ण-नाम का कीर्तन करते हुए जा रहे थे, तो बाघों तथा हाथियों ने उन्हें देखकर रास्ता छोड़ दिया।

পালে-পালে ব্যাঘ্র, হস্তী, গণ্ডার, শূকর-গণ ।
তার মধ্যে আবেশে প্রভু করিলা গমন ॥২৬॥

पाले-पाले व्याघ्र, हस्ती, गण्डार, शूकर-गण ।
तार मध्ये आवेशे प्रभु करिला गमन ॥ २६॥

पाले-पाले—झुण्डों में; **व्याघ्र**—बाघ; **हस्ती**—हाथी; **गण्डार**—गैंडे; **शूकर-गण**—

सूअर; **तार मध्ये**—उनके बीच से; **आवेशे**—आवेश में; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **करिला गमन**—गुजरे।

अनुवाद

जब महाप्रभु भावावेश में जंगल से होकर जा रहे थे, तो झुंड के झुंड बाघ, हाथी, गैंडे तथा सुअर आये। महाप्रभु इन सबके बीच से होकर चलते गये।

देखि' भट्टाचार्यের মনে হয় মহা-ভয় ।
প্রভুর প্রতাপে তারা এক পাশ হয় ॥২৭॥

देखि' भट्टाचार्यের मने हय महा-भय ।
प्रभुर प्रतापे तारा एक पाश हय ॥ २७॥

देखि'—देखकर; **भट्टाचार्यের**—भट्टाचार्य के; **मने**—मन में; **हय**—हुआ; **महा-भय**—बहुत भय; **प्रभुर प्रतापे**—चैतन्य महाप्रभु के प्रभाव से; **तारा**—वे; **एक पाश हय**—एक ओर होकर खड़े रहे।

अनुवाद

बलभद्र भट्टाचार्य उन्हें देखकर अत्यन्त डरा हुआ था, किन्तु श्री चैतन्य महाप्रभु के प्रताप से सारे पशु एक ओर खड़े रहे।

এক-দিন পথে ব্যাঘ্র করিয়াছে শয়ন ।
আবেশে তার গায়ে প্রভুর লাগিল চরণ ॥২৮॥

एक-दिन पथे व्याघ्र करियाछे शयन ।
आवेशे तार गाये प्रभुर लागिल चरण ॥ २८॥

एक-दिन—एक दिन; **पथे**—मार्ग में; **व्याघ्र**—एक बाघ; **करियाछे शयन**—लेटा हुआ था; **आवेशे**—प्रेमावेश में; **तार गाये**—उसके शरीर पर; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **लागिल**—लग गये; **चरण**—चरणकमल।

अनुवाद

एक दिन एक बाघ रास्ते में लेटा हुआ था और श्री चैतन्य महाप्रभु भावावेश में रास्ते पर चले जा रहे थे, तो उनका पाँव उस बाघ से छू गया।

प्रभु कहे,—कह 'कृष्ण', व्याघ्र उठिल ।
'कृष्ण' 'कृष्ण' कहि' व्याघ्र नाचिते लागिल ॥२९॥

प्रभु कहे,—कह 'कृष्ण', व्याघ्र उठिल ।
'कृष्ण' 'कृष्ण' कहि' व्याघ्र नाचिते लागिल ॥ २९ ॥

प्रभु कहे—श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा; **कह कृष्ण**—कृपया हरे कृष्ण कहो; **व्याघ्र उठिल**—बाघ उठ खड़ा हुआ; **कृष्ण कृष्ण कहि'**—'कृष्ण कृष्ण' कहते हुए; **व्याघ्र**—बाघ ने; **नाचिते**—नाचना; **लागिल**—शुरू किया।

अनुवाद

महाप्रभु ने कहा, "कृष्ण-नाम का कीर्तन करो!" इस पर वह बाघ तुरन्त उठ खड़ा हुआ और "कृष्ण! कृष्ण!" कहकर नृत्य करने लगा।

आर दिने महाप्रभु करे नदी स्नान ।
मत्त-हस्ति-यूथ आइल करिते जल-पान ॥३०॥

आर दिने महाप्रभु करे नदी स्नान ।
मत्त-हस्ति-यूथ आइल करिते जल-पान ॥ ३० ॥

आर दिने—एक अन्य दिन; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **करे**—किया; **नदी स्नान**—नदी में स्नान; **मत्त-हस्ति-यूथ**—उन्मत्त हाथियों का झुंड; **आइल**—आ गया; **करिते**—करने के लिए; **जल-पान**—जल पान।

अनुवाद

अन्य दिन जब श्री चैतन्य महाप्रभु नदी में स्नान कर रहे थे, तब मत्त हाथियों का एक झुंड पानी पीने के लिए वहाँ आया।

प्रभु जल-कृत्य करे, आगे हस्ती आइला ।
'कृष्ण कह' बलि' प्रभु जल फेलि' मारिला ॥३१॥

प्रभु जल-कृत्य करे, आगे हस्ती आइला ।
'कृष्ण कह' बलि' प्रभु जल फेलि' मारिला ॥ ३१ ॥

प्रभु—श्री चैतन्य महाप्रभु; **जल-कृत्य करे**—स्नान कर रहे थे और जल में गायत्री मंत्र जप रहे थे; **आगे**—सामने; **हस्ती**—हाथी; **आइला**—आये; **कृष्ण कह**—हरे कृष्ण बोलो; **बलि'**—कहकर; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **जल फेलि'**—जल उछालकर; **मारिला**—मारा।

अनुवाद

जब महाप्रभु स्नान कर रहे थे और गायत्री मन्त्र जप रहे थे, तब वे हाथी उनके सामने आये। महाप्रभु ने तुरन्त उन हाथियों पर पानी उछालकर उनसे कृष्ण-नाम का उच्चारण करने के लिए कहा।

तात्पर्य

श्री चैतन्य महाप्रभु पूर्ण पुरूषोत्तम भगवान् थे, जो एक महाभागवत अर्थात् महान् उन्नत भक्त की भूमिका निभा रहे थे। महाभागवत स्तर पर भक्त अपने मित्रों तथा शत्रुओं में कोई अन्तर नहीं करता। उस स्तर पर वह सबको कृष्ण-भक्त के रूप में देखता है। जैसाकि *भगवद्गीता* (५.१८) में कहा गया है :

विद्याविनयसम्पन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि।
शुनि चैव श्वपाके च पण्डिताः समदर्शिनः॥

"विनीत साधु वास्तविक ज्ञान के कारण विद्वान तथा विनयी ब्राह्मण, गाय, हाथी, कुत्ता, तथा चण्डाल को समान दृष्टि से देखता है।"

महाभागवत, विद्वान तथा आध्यात्मिक चेतना में उन्नत होने के कारण एक बाघ, हाथी या विद्वान में कोई अन्तर नहीं देखता। उन्नत चेतना की पहचान यह है कि वह निर्भय हो जाता है। वह किसी से ईर्ष्या नहीं करता और भगवान् की सेवा में सदैव लगा रहता है। वह हर जीव को भगवान् के शाश्वत अंश के रूप में देखता है और अपनी क्षमता अनुसार भगवत्कृपा से सेवा करता है। जैसाकि कृष्ण *भगवद्गीता* (१५.१५) में पुष्टि करते हैं :

सर्वस्य चाहं हृदि सन्निविष्टो
मत्तः स्मृतिर्ज्ञानमपोहनं च॥

"मैं हर एक के हृदय में स्थित हूँ और मुझ से ही स्मृति, ज्ञान तथा विस्मृति उत्पन्न होती है।"

महाभागवत जानता है कि कृष्ण सबके हृदय में स्थित हैं। कृष्ण आदेश देते हैं और जीव उनके आदेशों का पालन करता है। बाघ, हाथी तथा सुअर के हृदय में भी कृष्ण हैं। इसीलिए कृष्ण उनसे कहते हैं, "ये महाभागवत हैं। इन्हें परेशान मत करना।" तो भला पशु ऐसे महापुरुष से क्यों ईर्ष्या करने लगे? कनिष्ठ भक्तों या भक्ति में कम उन्नत लोगों को महाभागवत का अनुकरण

नहीं करना चाहिए। उन्हें केवल उनके पदचिह्नों पर चलना चाहिए। *अनुकरण* शब्द का अर्थ है "नकल करना" और *अनुसरण* का अर्थ है "शिक्षाओं का पालन करना।" हमें महाभागवत या श्री चैतन्य महाप्रभु के कार्यकलापों का अनुकरण करने का प्रयास नहीं करना चाहिए। हमें हमारी क्षमता के अनुसार उनके पदचिह्नों का अनुगमन करने का सर्वोत्तम प्रयास करना चाहिए। महाभागवत का हृदय भौतिक कल्मष से पूर्णतया मुक्त होता है और वह बाघ तथा हाथी जैसे हिंसक पशुओं तक का मित्र बन सकता है। वस्तुत: महाभागवत उनके साथ अपने घनिष्ठ मित्र जैसा ही व्यवहार करता है। इस स्तर पर पहुँचकर ईर्ष्या का प्रश्न ही नहीं उठता। जब महाप्रभु जंगल से होकर जा रहे थे, तब वे भावावेश में थे और वे इस जंगल को वृन्दावन समझ रहे थे। वे तो केवल कृष्ण की खोज कर रहे थे।

সেই জল-বিন্দু-কণা লাগে যার গায় ।
সেই 'কৃষ্ণ' 'কৃষ্ণ' কহে, প্রেমে নাচে, গায় ॥৩২॥

सेइ जल-बिन्दु-कणा लागे यार गाय ।
सेइ 'कृष्ण' 'कृष्ण' कहे, प्रेमे नाचे, गाय ॥ ३२॥

सेइ—उस; **जल**—जल की; **बिन्दु**—बूँदे; **कणा**—कण; **लागे**—स्पर्श की; **यार**—जिनके; **गाय**—शरीर; **सेइ**—वे; **कृष्ण कृष्ण**—कृष्ण कृष्ण; **कहे**—कहने लगे; **प्रेमे**—प्रेमावेश में; **नाचे**—नाचने लगे; **गाय**—गाने लगे।

अनुवाद

जिन हाथियों के शरीर पर महाप्रभु द्वारा उछाला पानी पड़ा, वे "कृष्ण! कृष्ण!" कहने लगे और प्रेम में नाचने और गाने लगे।

কেহ ভূমে পড়ে, কেহ করয়ে চিৎকার ।
দেখি' ভট্টাচার্যের মনে হয় চমৎকার ॥৩৩॥

केह भूमे पड़े, केह करये चित्कार ।
देखि' भट्टाचार्य्येर मने हय चमत्कार ॥ ३३॥

केह—उनमें से कुछ; **भूमे**—भूमि पर; **पड़े**—गिर गये; **केह**—उनमें से कुछ ने; **करये**—

किया; **चित्-कार**—चिंघाड़े; **देखि'**—देखकर; **भट्टाचार्य्येर**—भट्टाचार्य के; **मने**—मन में; **हय**—हो गया; **चमत्कार**—आश्चर्य।

अनुवाद

कुछ हाथी भूमि पर गिर पड़े और कुछ प्रेमवश चिँघाड़ने लगे। यह देखकर बलभद्र भट्टाचार्य एकदम आश्चर्यचकित हो गया।

पथे याइते करे प्रभु उच्च सङ्कीर्तन ।
मधुर कण्ठ-ध्वनि शुनि' आइसे मृगी-गण ॥३४॥

पथे याइते करे प्रभु उच्च सङ्कीर्तन ।
मधुर कण्ठ-ध्वनि शुनि' आइसे मृगी-गण ॥ ३४॥

पथे याइते—मार्ग से गुजरते समय; **करे**—किया; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **उच्च**—उच्च स्वर में; **सङ्कीर्तन**—हरे कृष्ण का कीर्तन; **मधुर**—मधुर; **कण्ठ-ध्वनि**—उनके कण्ठ की मधुर ध्वनि; **शुनि'**—सुनकर; **आइसे**—आईं; **मृगी-गण**—हिरणियाँ।

अनुवाद

कभी-कभी जंगल से गुजरते हुए श्री चैतन्य महाप्रभु उच्च स्वर से कीर्तन करने लगते। उनकी मधुर वाणी सुनकर सारी हिरणियाँ उनके निकट आ जातीं।

डाहिने-वामे ध्वनि शुनि' याय प्रभु-सङ्गे ।
प्रभु तार अङ्ग मुछे, श्लोक पड़े रङ्गे ॥३५॥

डाहिने-वामे ध्वनि शुनि' याय प्रभु-सङ्गे ।
प्रभु तार अङ्ग मुछे, श्लोक पड़े रङ्गे ॥ ३५॥

डाहिने-वामे—दाहिनी और बाईं ओर; **ध्वनि**—ध्वनि; **शुनि'**—सुनकर; **याय**—वे पीछे पीछे गये; **प्रभु-सङ्गे**—महाप्रभु के साथ; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **तार**—उनके; **अङ्ग**—शरीर; **मुछे**—थपथपाते; **श्लोक**—श्लोक; **पड़े**—पढ़ते; **रङ्गे**—अति उत्सुक होकर।

अनुवाद

उनका उच्च स्वर सुनकर हिरणियाँ उनके दाएँ-बाएँ चलती जातीं। महाप्रभु उन्हें अत्यन्त उत्सुकता से श्लोक सुनाते हुए उनकी पीठ थपथपाते।

धन्याः स्म मूढ-मतयोऽपि हरिण्य एता
या नन्द-नन्दनमुपात्त-विचित्र-वेशम् ।
आकर्ण्य वेणु-रणितं सह-कृष्ण-सारा:
पूजां दधुर्विरचितां प्रणयावलोकैः ॥ ३६॥

धन्याः स्म मूढ-मतयोऽपि हरिण्य एता
या नन्द-नन्दनमुपात्त-विचित्र-वेशम् ।
आकर्ण्य वेणु-रणितं सह-कृष्ण-साराः
पूजां दधुर्विरचितां प्रणयावलोकैः ॥ ३६ ॥

धन्याः—धन्य, भाग्यशाली; **स्म**—निश्चित रूप से; **मूढ-मतयः**—मूर्ख, बुद्धिहीन; **अपि**—यद्यपि; **हरिण्यः**—हिरणी; **एताः**—ये; **याः**—जो; **नन्द-नन्दनम्**—महाराज नन्द के पुत्र; **उपात्त-विचित्र-वेशम्**—आकर्षक वस्त्र पहने; **आकर्ण्य**—सुनकर; **वेणु-रणितम्**—उसकी वंशी की ध्वनि; **सह-कृष्ण-साराः**—काले हिरणों (उनके पतियों) के साथ; **पूजाम् दधुः**—उन्होंने पूजा की; **विरचिताम्**—किया; **प्रणय-अवलोकैः**—उनकी प्रेम भरी निगाहों से।

अनुवाद

"'वे मूर्ख हिरण धन्य हैं, क्योंकि वे सुन्दर वेशधारी और बाँसुरी बजा रहे नन्द महाराज के पुत्र के समीप आये। निस्सन्देह, हिरण तथा हिरणियाँ प्रेम की चितवनों से भगवान् की पूजा करते हैं।'"

तात्पर्य

यह श्लोक *श्रीमद्भागवत* (१०.२१.११) का है, जो वृन्दावन की गोपियों की उक्ति-रूप में है।

हेन-काले व्याघ्र तथा आइल पाँच-सात ।
व्याघ्र-मृगी मिलि' चले महाप्रभुर साथ ॥ ३७॥

हेन-काले व्याघ्र तथा आइल पाँच-सात ।
व्याघ्र-मृगी मिलि' चले महाप्रभुर साथ ॥ ३७॥

हेन-काले—इस समय; **व्याघ्र**—बाघ; **तथा**—वहाँ; **आइल**—आये; **पाँच-सात**—पाँच-सात; **व्याघ्र-मृगी**—बाघ तथा हिरण; **मिलि'**—इकट्ठे मिलकर; **चले**—चलने लगे; **महाप्रभुर साथ**—श्री चैतन्य महाप्रभु के साथ।

अनुवाद

जब श्री चैतन्य महाप्रभु जंगल से होकर जा रहे थे, तो पाँच-सात बाघ आये और वे हिरणों के साथ मिलकर महाप्रभु के पीछे-पीछे चलने लगे।

देखि' महाप्रभुर 'वृन्दावन'-स्मृति हैल ।
वृन्दावन-गुण-वर्णन श्लोक पड़िल ॥ ३८॥
देखि' महाप्रभुर 'वृन्दावन'-स्मृति हैल ।
वृन्दावन-गुण-वर्णन श्लोक पड़िल ॥ ३८॥

देखि'—देखकर; **महाप्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु को; **वृन्दावन**—वृन्दावन की पवित्र भूमि की; **स्मृति हैल**—याद आई; **वृन्दावन**—श्री वृन्दावन के; **गुण**—गुणों के; **वर्णन**—वर्णन कर; **श्लोक**—श्लोक; **पड़िल**—पढ़ा।

अनुवाद

बाघों तथा हिरणों को अपने पीछे आते देखकर श्री चैतन्य महाप्रभु को सहसा वृन्दावन का स्मरण हो आया। अतः वे वृन्दावन के दिव्य गुणों का वर्णन करने वाला श्लोक सुनाने लगे।

यत्र नैसर्ग-दुर्वैराः सहासन्नृ-मृगादयः ।
मित्राणीवाजितावास-द्रुत-रूट्तर्षणादिकम् ॥ ३९॥
यत्र नैसर्ग-दुर्वैराः सहासन्नृ-मृगादयः ।
मित्राणीवाजितावास-द्रुत-रुट्तर्षणादिकम् ॥ ३९॥

यत्र—जहाँ; **नैसर्ग**—स्वाभाविक रूप से; **दुर्वैराः**—शत्रुता में रहकर; **सह आसन्**—इकट्टे रहते हैं; **नृ**—मनुष्य; **मृग-आदयः**—और पशु; **मित्राणि**—मित्र; **इव**—की भाँति; **अजित**—भगवान् कृष्ण के; **आवास**—निवास; **द्रुत**—चले गये; **रुट्**—क्रोध; **तर्षण-आदिकम्**—प्यास आदि।

अनुवाद

"'वृन्दावन भगवान् का दिव्य धाम है। वहाँ न भूख है, न क्रोध, न ही प्यास है। यद्यपि मनुष्यों तथा हिंसक पशुओं में सहज वैर होता है, किन्तु वे वहाँ दिव्य भाव में मैत्रीपूर्वक रहते हैं।'"

तात्पर्य

यह कथन *श्रीमद्भागवत* (१०.१३.६०) का है। श्रीकृष्ण के बछड़ों और गोपाल बालकों को चुराकर ब्रह्माजी ने उन्हें सुला दिया था और छिपा दिया था। एक क्षण बाद ब्रह्मा कृष्ण की दशा देखने आये। जब उन्होंने देखा कि कृष्ण अब भी अपने ग्वालमित्रों तथा पशुओं के साथ व्यस्त हैं और तनिक भी विचलित नहीं हैं, तो उन्होंने वृन्दावन के दिव्य वैभव की प्रशंसा की।

'कृष्ण कृष्ण कह' करि' प्रभु यबे बलिल ।
'कृष्ण' कहि' व्याघ्र-मृग नाचिते लागिल ॥ ४० ॥

'कृष्ण कृष्ण कह' करि' प्रभु यबे बलिल ।
'कृष्ण' कहि' व्याघ्र-मृग नाचिते लागिल ॥ ४० ॥

कृष्ण कृष्ण कह—"कृष्ण! कृष्ण!" कहो; **करि'**—इस प्रकार; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **यबे**—जब; **बलिल**—उच्चार किया; **कृष्ण कहि'**—कृष्ण के पवित्र नाम का; **व्याघ्र-मृग**—बाघ और हिरन; **नाचिते लागिल**—नाचने लगे।

अनुवाद

जब श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा, "'कृष्ण! कृष्ण!' बोलो" तो बाघ तथा हिरन "कृष्ण!" का नाम लेने लगे और नृत्य करने लगे।

नाचे, कुन्दे व्याघ्र-गण मृगी-गण-सङ्गे ।
बलभद्र-भट्टाचार्य देखे अपूर्व-रङ्गे ॥ ४१ ॥

नाचे, कुन्दे व्याघ्र-गण मृगी-गण-सङ्गे ।
बलभद्र-भट्टाचार्य्य देखे अपूर्व-रङ्गे ॥ ४१ ॥

नाचे—नाचने लगे; **कुन्दे**—कूदने लगे; **व्याघ्र-गण**—बाघ; **मृगी-गण-सङ्गे**—हिरणियों के साथ; **बलभद्र-भट्टाचार्य्य**—बलभद्र भट्टाचार्य; **देखे**—देखने लगा; **अपूर्व-रङ्गे**—अति चकित होकर।

अनुवाद

जब सारे बाघ तथा हिरन नाचने और कूदने लगे, तो बलभद्र भट्टाचार्य उन्हें देखकर आश्चर्यचकित रह गया।

ব্যাঘ্র-মৃগ অন্যোন্যে করে আলিঙ্গন ।
মুখে মুখ দিয়া করে অন্যোন্যে চুম্বন ॥ ৪২ ॥

व्याघ्र-मृग अन्योन्ये करे आलिङ्गन ।
मुखे मुख दिया करे अन्योन्ये चुम्बन ॥ ४२ ॥

व्याघ्र-मृग—बाघ और मृग; **अन्योन्ये**—एक दूसरे को; **करे**—करने लगे; **आलिङ्गन**—आलिंगन; **मुखे मुख दिया**—मुख से मुख छूकर; **करे**—करने लगे; **अन्योन्ये चुम्बन**—एक दूसरे का चुम्बन।

अनुवाद

बाघ तथा हिरन एक-दूसरे का आलिंगन करने लगे और एक-दूसरे का मुख स्पर्श करके चूमने लगे।

কৌতুক দেখিয়া প্রভু হাসিতে লাগিলা ।
তা-সবাকে তাহাঁ ছাড়ি' আগে চলি' গেলা ॥ ৪৩ ॥

कौतुक देखिया प्रभु हासिते लागिला ।
ता-सबाके ताहाँ छाड़ि' आगे चलि' गेला ॥ ४३ ॥

कौतुक देखिया—यह कौतुक देखकर; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **हासिते लागिला**—मुस्कुराने लगे; **ता-सबाके**—वे सब; **ताहाँ छाड़ि'**—उस स्थान को छोड़कर; **आगे**—आगे; **चलि' गेला**—चले गये।

अनुवाद

जब श्री चैतन्य महाप्रभु ने यह कौतुक देखा, तो वे मन्दहास करने लगे। अन्त में उन पशुओं को छोड़कर महाप्रभु अपने रास्ते पर चल दिये।

ময়ূরাদি পক্ষি-গণ প্রভুরে দেখিয়া ।
সঙ্গে চলে, 'কৃষ্ণ' বলি' নাচে মত্ত হঞা ॥ ৪৪ ॥

मयूरादि पक्षि-गण प्रभुरे देखिया ।
सङ्गे चले, 'कृष्ण' बलि' नाचे मत्त हञा ॥ ४४ ॥

मयूर-आदि—मयूर आदि; **पक्षि-गण**—विभिन्न पक्षी; **प्रभुरे**—श्री चैतन्य महाप्रभु को; **देखिया**—देखकर; **सङ्गे चले**—साथ चलने लगे; **कृष्ण बलि'**—कृष्ण के पावन नाम का कीर्तन करते हुए; **नाचे**—नाचने लगे; **मत्त हञा**—उन्मत्त होकर।

अनुवाद

मोर इत्यादि पक्षियों ने श्री चैतन्य महाप्रभु को देखा, तो उन्होंने भी कीर्तन करते और नाचते हुए महाप्रभु का पीछा करना शुरू कर दिया। वे सब कृष्ण के पावन नाम से मतवाले हो गये थे।

'हरि-बोल' बलि' प्रभु करे उच्च-ध्वनि ।
वृक्ष-लता——प्रफुल्लित, सेइ ध्वनि शुनि, ॥ ४५ ॥

'हरि-बोल' बलि' प्रभु करे उच्च-ध्वनि ।
वृक्ष-लता——प्रफुल्लित, सेइ ध्वनि शुनि, ॥ ४५ ॥

हरि-बोल—"हरि बोल" की ध्वनि; **बलि'**—बोलकर; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **करे**—की; **उच्च-ध्वनि**—उच्च ध्वनि; **वृक्ष-लतां**—वृक्ष और लताएँ; **प्रफुल्लित**—अत्यन्त प्रसन्न हो गये; **सेइ**—वह; **ध्वनि**—ध्वनि; **शुनि'**—सुनकर।

अनुवाद

जब महाप्रभु उच्चस्वर से "हरिबोल" का उच्चारण करते, तो सारे वृक्ष तथा लताएँ उनकी ध्वनि सुनकर प्रफुल्लित हो जातीं।

तात्पर्य

हरे कृष्ण मन्त्र का उच्चस्वर से कीर्तन करना इतना शक्तिशाली है कि यह वृक्षों तथा लताओं के भी कानों में प्रविष्ट हो सकता है—पशुओं तथा मनुष्यों के विषय में तो कहना ही क्या। एक बार महाप्रभु ने हरिदास ठाकुर से पूछा था कि पेड़-पौधों का किस तरह उद्धार किया जा सकता है। इस पर हरिदास ठाकुर ने कहा था कि हरे कृष्ण महामन्त्र के उच्चस्वर से कीर्तन से न केवल पेड़-पौधे अपितु कीड़े-मकोड़े तथा अन्य सभी प्राणी भी लाभान्वित होंगे। अत: हरे कृष्ण के ऊँचे कीर्तन से क्षुब्ध नहीं होना चाहिए, क्योंकि यह कीर्तन करने वाले के लिए ही नहीं, अपितु इसे सुनने का अवसर पाने वाले हर एक श्रोता के लिए भी लाभप्रद है।

'झारिखण्डे' स्थावर-जङ्गम आछे यत ।
कृष्ण-नाम दिया कैल प्रेमेते उन्मत्त ॥ ४६ ॥

'झारिखण्डे' स्थावर-जङ्गम आछे यत ।
कृष्ण-नाम दिया कैल प्रेमेते उन्मत्त ॥ ४६ ॥

झारिखण्डे—झारखण्ड नामक स्थान में; **स्थावर-जङ्गम**—चर-अचर; **आछे**—हैं; **यत**—सभी; **कृष्ण-नाम दिया**—सबको भगवान् कृष्ण का पवित्र नाम देकर; **कैल**—किया; **प्रेमेते**—प्रेम में; **उन्मत्त**—पागल।

अनुवाद

इस तरह झारखण्ड के वन के सारे चर-अचर जीव महाप्रभु द्वारा ध्वनित कृष्ण का पवित्र नाम सुनकर मतवाले हो रहे थे।

तात्पर्य

झारखण्ड के विशाल जंगल में आटगड़, ढेंकानल, आंगुल, लाहारा, कियञ्झड़, बामड़ा, बोनाइ, गांगपुर, छोटा नागपुर, यशपुर तथा सरगुजा समेत विशाल भूभाग है। ये सारे स्थान पर्वतों तथा जंगलों से ढके हैं और झारखंड कहलाते हैं।

येई ग्राम दिया यान, याहाँ करेन स्थिति ।
से-सब ग्रामेर लोकेर हय 'प्रेम-भक्ति' ॥ ४७ ॥

येइ ग्राम दिया ग्यान, ग्याहाँ करेन स्थिति ।
से-सब ग्रामेर लोकेर हय 'प्रेम-भक्ति' ॥ ४७ ॥

येइ ग्राम—जिन गाँवों में से; **दिया ग्यान**—महाप्रभु गुजरते थे; **ग्याहाँ**—जहाँ; **करेन**—लेते थे; **स्थिति**—विश्राम; **से-सब**—वे सब; **ग्रामेर**—गाँवों के; **लोकेर**—लोगों में; **हय**—जागृत हो गई; **प्रेम-भक्ति**—भगवान् की प्रेमभक्ति।

अनुवाद

महाप्रभु जिन-जिन गाँवों से होकर गये और जिन-जिन स्थानों में यात्रा के दौरान रुके, वहाँ के सारे लोग पवित्र हो गये और उनमें भगवत्प्रेम जागृत हो गया।

केह यदि ताँर मुखे शुने कृष्ण-नाम ।
ताँर मुखे आन शुने ताँर मुखे आन ॥ ४८ ॥

सबे 'कृष्ण' 'हरि' बलि' नाचे, कान्दे, हासे ।
परम्पराय 'वैष्णव' हइल सर्व देशे ॥४९॥

केह यदि ताँर मुखे शुने कृष्ण-नाम ।
ताँर मुखे आन शुने ताँर मुखे आन ॥४८॥
सबे 'कृष्ण' 'हरि' बलि' नाचे, कान्दे, हासे ।
परम्पराय 'वैष्णव' हइल सर्व देशे ॥४९॥

केह—किसी ने; **यदि**—जब; **ताँर मुखे**—उनके मुख से; **शुने**—सुना; **कृष्ण-नाम**—हरे कृष्ण मन्त्र का कीर्तन; **ताँर मुखे**—उसके मुख से; **आन शुने**—किसी और ने सुना; **ताँर मुखे**—और उसके मुख से; **आन**—किसी और ने; **सबे**—वे सब; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण के पावन नाम का; **हरि**—भगवान् का अन्य पावन नाम; **बलि'**—बोलकर; **नाचे**—नाचने लगे; **कान्दे**—रोने लगे; **हासे**—हँसने लगे; **परम्पराय**—परम्परा से; **वैष्णव**—भक्त; **हइल**—हो गये; **सर्व-देशे**—सभी देशों में।

अनुवाद

यदि किसी ने श्री चैतन्य महाप्रभु के मुख से पवित्र नाम का कीर्तन सुना और अन्य किसी ने इस व्यक्ति से यह कीर्तन सुना और पुनः तीसरे व्यक्ति से और किसी ने सुना, तो इस तरह की गुरु-शिष्य परम्परा के माध्यम से सारे देशों के लोग वैष्णव बन गये। इस प्रकार हर व्यक्ति कृष्ण तथा हरि के नाम का कीर्तन करता, नाचता, रोता और हँसता।

तात्पर्य

यहाँ पर हरे कृष्ण महामन्त्र की दिव्य शक्ति का वर्णन हुआ है। पहली बात यह है कि पवित्र नाम का उच्चारण श्री चैतन्य महाप्रभु द्वारा किया जा रहा था। जब कोई व्यक्ति प्रत्यक्ष उनसे सुनता है, तब वह शुद्ध हो जाता है। जब अन्य व्यक्ति उस व्यक्ति से सुनता है, तो वह भी शुद्ध हो जाता है। इस तरह शुद्ध भक्तों में शुद्धि की यह प्रक्रिया चलती रहती है। श्री चैतन्य महाप्रभु पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् हैं और कोई भी उनकी तरह शक्तिशाली नहीं हो सकता। फिर भी किसी शुद्ध भक्त के उच्चारण से हजारों लोग शुद्ध हो सकते हैं। यह शक्ति हर व्यक्ति के भीतर है, बशर्ते कि वह निरपराध होकर तथा भौतिक स्वार्थ से रहित होकर हरे कृष्ण महामन्त्र का कीर्तन करे। इस तरह निरपराध

भाव से जब कोई शुद्ध भक्त कीर्तन करेगा, तो दूसरा व्यक्ति वैष्णव बन जायेगा और तब उससे अन्य वैष्णव प्रकट होगा। यही परम्परा पद्धति है।

यद्यपि प्रभु लोक-सङ्घट्टेर त्रासे ।
प्रेम 'गुप्त' करेन, बाहिरे ना प्रकाशे ॥५०॥

यद्यपि प्रभु लोक-सङ्घट्टेर त्रासे ।
प्रेम 'गुप्त' करेन, बाहिरे ना प्रकाशे ॥५०॥

यद्यपि—यद्यपि; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **लोक-सङ्घट्टेर**—लोगों की भीड़ से; **त्रासे**—भयभीत होकर; **प्रेम**—प्रेम को; **गुप्त करेन**—गुप्त रखते हैं; **बाहिरे**—बाहर; **ना**—नहीं; **प्रकाशे**—व्यक्त करते।

अनुवाद

महाप्रभु ने हमेशा अपने प्रेमभाव का प्रदर्शन नहीं किया। वे लोगों की भीड़ से भयभीत थे, अतः उन्होंने अपने प्रेम को गुप्त रखा।

तथापि ताँर दर्शन-श्रवण-प्रभावे ।
सकल देशेर लोक हइल 'वैष्णवे' ॥५१॥

तथापि ताँर दर्शन-श्रवण-प्रभावे ।
सकल देशेर लोक हइल 'वैष्णवे' ॥५१॥

तथापि—तथापि; **ताँर**—उनके; **दर्शन**—दर्शन की; **श्रवण**—श्रवण की; **प्रभावे**—शक्ति से; **सकल**—सभी; **देशेर**—देशों के; **लोक**—लोग; **हइल**—हो गये; **वैष्णवे**—भगवान् के शुद्ध भक्त।

अनुवाद

यद्यपि श्री चैतन्य महाप्रभु ने अपने सहज प्रेमभाव को प्रकट नहीं किया, फिर भी हर व्यक्ति उन्हें देखकर और सुनकर शुद्ध भक्त बन गया।

तात्पर्य

श्रील रूप गोस्वामी ने श्री चैतन्य महाप्रभु को *महावदान्य अवतार* कहा है। यद्यपि इस समय श्री चैतन्य महाप्रभु प्रकट रूप में उपस्थित नहीं हैं, किन्तु सारे संसार के लोग उनके नाम (*श्रीकृष्णचैतन्य प्रभु नित्यानन्द श्रीअद्वैत गदाधर श्रीवासादि गौरभक्तवृन्द*) का कीर्तन करके भक्त बनते जा रहे हैं। ऐसा महाप्रभु

के पवित्र नाम के प्रेममय कीर्तन के कारण हो रहा है। कहा जाता है कि शुद्ध भक्त भगवान् का हर क्षण दर्शन कर सकता है, जिसके फलस्वरूप वह भगवत्-शक्ति से आवेशित रहता है। इसकी पुष्टि *ब्रह्म-संहिता* (५.३८) द्वारा होती है—*प्रेमाञ्जनच्छुरितभक्तिविलोचनेन सन्तः सदैव हृदयेषु विलोकयन्ति।* श्री चैतन्य महाप्रभु ५०० वर्ष पूर्व प्रकट हुए, किन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि उनकी उपस्थिति के समय हरे कृष्ण महामन्त्र जितना शक्तिशाली था, अब वह उससे कम शक्तिशाली है। परम्परा के माध्यम से श्री चैतन्य महाप्रभु का श्रवण करके मनुष्य शुद्ध हो सकता है। इसलिए इस श्लोक में कहा गया है—*तथापि ताँर दर्शन-श्रवण-प्रभावे।* ऐसा नहीं है कि हर व्यक्ति कृष्ण या श्रीकृष्ण चैतन्य को प्रकट रूप में देख सकता है, किन्तु यदि वह *श्रीचैतन्य-चरितामृत* जैसे ग्रन्थों तथा शुद्ध वैष्णवों की परम्परा से उनके विषय में श्रवण करता है, तो उसके संसारी इच्छाओं तथा निजी स्वार्थों से रहित शुद्ध वैष्णव बनने में कोई बाधा नहीं है।

গৌড়, বঙ্গ, উৎকল, দক্ষিণ-দেশে গিয়া ।
লোকের নিস্তার কৈল আপনে ভ্রমিয়া ॥৫২॥

गौड़, बङ्ग, उत्कल, दक्षिण-देशे गिया ।
लोकेर निस्तार कैल आपने भ्रमिया ॥५२॥

गौड़—बंगाल; **बङ्ग**—पूर्वी बंगाल; **उत्कल**—उड़ीसा; **दक्षिण-देशे**—दक्षिण भारत; **गिया**—जाकर; **लोकेर**—सभी लोगों का; **निस्तार**—उद्धार; **कैल**—किया; **आपने**—स्वयं; **भ्रमिया**—भ्रमण करके।

अनुवाद

इस तरह श्री चैतन्य महाप्रभु ने बंगाल, पूर्वी बंगाल, उड़ीसा तथा दक्षिणी देशों की यात्रा की और कृष्णभावना का प्रसार करके सभी प्रकार के लोगों का उद्धार किया।

মথুরা যাইবার ছলে আসেন ঝারিখণ্ড ।
ভিল্ল-প্রায় লোক তাহাঁ পরম-পাষণ্ড ॥৫৩॥

मथुरा याइबार छले आसेन झारिखण्ड ।
भिल्ल-प्राय लोक ताहाँ परम-पाषण्ड ॥ ५३ ॥

मथुरा—मथुरा; **याइबार**—जाने के; **छले**—बहाने से; **आसेन**—आये; **झारिखण्ड**—झारखण्ड में; **भिल्ल-प्राय**—भीलों की तरह; **लोक**—लोग; **ताहाँ**—वहाँ; **परम-पाषण्ड**—भगवद्भावना से रहित।

अनुवाद

जब मथुरा जाते हुए महाप्रभु झारिखण्ड आये, तो उन्होंने देखा कि वहाँ के लोग लगभग असभ्य थे और भगवद्भावना से विहीन थे।

तात्पर्य

भिल्ल शब्द भीलों की जाति के लोगों के लिए आया है। ये भील काले अफ्रीकी जैसे होते हैं और शूद्रों से भी निम्न होते हैं। ऐसे लोग प्रायः जंगलों में रहते हैं और इन्हीं से चैतन्य महाप्रभु की भेंट हुई थी।

নাম-প্রেম দিয়া কৈল সবার নিস্তার ।
চৈতন্যের গূঢ়-লীলা বুঝিতে শক্তি কার ॥ ৫৪ ॥

नाम-प्रेम दिया कैल सबार निस्तार ।
चैतन्येर गूढ़-लीला बुझिते शक्ति कार ॥ ५४ ॥

नाम-प्रेम दिया—उनको प्रेमावेश तथा पावन नाम प्रदान कर; **कैल**—किया; **सबार निस्तार**—उन सबका उद्धार; **चैतन्येर**—चैतन्य महाप्रभु की; **गूढ़-लीला**—गूढ़ लीलाएँ; **बुझिते**—समझने की; **शक्ति**—शक्ति; **कार**—किसके पास है?

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने इन भीलों को भी पवित्र नाम का कीर्तन करने और दिव्य प्रेम-पद तक ऊपर उठने का अवसर प्रदान किया। इस तरह उन्होंने उन सबका उद्धार किया। भला महाप्रभु की दिव्य लीलाओं को समझ पाने की शक्ति किसमें है?

तात्पर्य

श्री चैतन्य महाप्रभु की दया के प्रमाणस्वरूप हम अनुभव कर रहे हैं कि अफ्रीका के लोग अन्य वैष्णवों की तरह कृष्णभावनामृत स्वीकार करने, नाचने, गाने और प्रसाद ग्रहण करने लगे हैं। यह सब महाप्रभु की शक्ति का फल है।

सारे जगत् में यह शक्ति किस तरह कार्य कर रही है, इसे भला कौन समझ सकता है ?

वन देखि' भ्रम हय——एइ 'वृन्दावन' ।
शैल देखि' मने हय——एइ 'गोवर्धन' ॥५५॥

वन देखि' भ्रम हय——एइ 'वृन्दावन' ।
शैल देखि' मने हय——एइ 'गोवर्धन' ॥५५॥

वन देखि'—वन देखकर; **भ्रम हय**—भ्रम हुआ; **एइ**—यह; **वृन्दावन**—वृन्दावन; **शैल देखि'**—पहाड़ी देखकर; **मने हय**—मन में विचार आया; **एइ गोवर्धन**—यही गोवर्धन पर्वत है।

अनुवाद

जब श्री चैतन्य महाप्रभु झारिखण्ड जंगल से होकर जा रहे थे, तब उन्होंने उसे वृन्दावन ही समझ लिया। जब वे पहाड़ियों से होकर गुजर रहे थे, तो उन्हें वे गोवर्धन पर्वत समझ बैठे।

याहाँ नदी देखे ताहाँ मानये——'कालिन्दी' ।
महा-प्रेमावेशे नाचे प्रभु पड़े कान्दि' ॥५६॥

याहाँ नदी देखे ताहाँ मानये——'कालिन्दी' ।
महा-प्रेमावेशे नाचे प्रभु पड़े कान्दि' ॥५६॥

याहाँ—जहाँ कहीं; **नदी**—नदी; **देखे**—देखते; **ताहाँ**—वहाँ; **मानये**—मान लिया; **कालिन्दी**—यमुना नदी है; **महा-प्रेम-आवेशे**—महा प्रेमावेश में; **नाचे**—नाचने लगे; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **पड़े**—गिर गये; **कान्दि'**—रोते हुए।

अनुवाद

इसी तरह जब भी श्री चैतन्य महाप्रभु कोई नदी देखते, तो वे उसे तुरन्त यमुना नदी मान बैठते। इस तरह जंगल में वे परम प्रेमावेश से पूर्ण हो जाते और नाचते तथा रोते-रोते गिर पड़ते थे।

पथे याइते भट्टाचार्य शाक-मूल-फल ।
याहाँ येई पायेन ताहाँ लयेन सकल ॥५७॥

पथे ग्राइते भट्टाचार्य्य शाक-मूल-फल ।
ग्राहाँ ग्रेइ पायेन ताहाँ लयेन सकल ॥५७॥

पथे ग्राइते—मार्ग में चलते समय; **भट्टाचार्य्य**—बलभद्र भट्टाचार्य; **शाक**—शाक (पालक); **मूल**—मूल (जड़ें); **फल**—फल; **ग्राहाँ**—जहाँ कहीं; **ग्रेइ**—जो कुछ; **पायेन**—वे पाते; **ताहाँ**—वहाँ; **लयेन**—वे ले लेते; **सकल**—सब।

अनुवाद

मार्ग में बलभद्र भट्टाचार्य सभी तरह के शाक, कन्द तथा फल जहाँ कहीं उपलब्ध होते, एकत्र कर लेते।

যে-গ্রামে রহেন প্রভু, তথায় ব্রাহ্মণ ।
পাঁচ-সাত জন আসি' করে নিমন্ত্রণ ॥৫৮॥

ग्रे-ग्रामे रहेन प्रभु, तथाय ब्राह्मण ।
पाँच-सात जन आसि' करे निमन्त्रण ॥५८॥

ग्रे-ग्रामे—जिस किसी गाँव में; **रहेन**—रहते; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **तथाय**—वहाँ; **ब्राह्मण**—ब्राह्मण; **पाँच-सात जन**—पाँच-सात व्यक्ति; **आसि'**—आकर; **करे**—कर जाते; **निमन्त्रण**—निमन्त्रण।

अनुवाद

जब भी श्री चैतन्य महाप्रभु किसी गाँव में जाते, तो पाँच-सात ब्राह्मण आकर महाप्रभु को निमन्त्रण दे जाते।

কেহ অন্ন আনি' দেয় ভট্টাচার্য-স্থানে ।
কেহ দুগ্ধ, দধি, কেহ ঘৃত, খণ্ড আনে ॥৫৯॥

केह अन्न आनि' देय भट्टाचार्य्य-स्थाने ।
केह दुग्ध, दधि, केह घृत, खण्ड आने ॥५९॥

केह—कोई; **अन्न**—अन्न; **आनि'**—लाकर; **देय**—दे जाता; **भट्टाचार्य्य-स्थाने**—बलभद्र भट्टाचार्य के पास; **केह**—कोई; **दुग्ध**—दुग्ध; **दधि**—दही; **केह**—कोई; **घृत**—घी; **खण्ड**—खांड; **आने**—ले आता।

अनुवाद

कुछ लोग अन्न लाकर बलभद्र भट्टाचार्य को दे जाते। अन्य लोग दूध तथा दही ले आते, तो कोई घी तथा शक्कर ले आता।

যাহাঁ বিপ্র নাহি তাহাঁ 'শূদ্র-মহাজন' ।
আসি' সবে ভট্টাচার্যে করে নিমন্ত্রণ ॥৬০॥

য়াহাঁ বিপ্র নাহি তাহাঁ 'শূদ্র-মহাজন' ।
আসি' সবে ভট্টাচার্য্যে করে নিমন্ত্রণ ॥৬০॥

য়াহাঁ—जहाँ कहीं; **विप्र**—ब्राह्मण; **नाहि**—न मिलता; **ताहाँ**—वहाँ; **शूद्र-महा-जन**—ब्राह्मणों के अलावा दूसरे कुलों के जन्मे भक्तों की; **आसि'**—आकर; **सबे**—वे सब; **भट्टाचार्य्ये**—बलभद्र भट्टाचार्य को; **करे निमन्त्रण**—निमन्त्रण देते।

अनुवाद

कुछ गाँवों में ब्राह्मण नहीं थे, फिर भी अब्राह्मण कुलों में जन्मे भक्त आते और बलभद्र भट्टाचार्य को आमन्त्रित कर जाते।

तात्पर्य

वास्तव में संन्यासी या ब्राह्मण निम्न कुल में जन्मे व्यक्ति के आमन्त्रण को स्वीकार नहीं करते। किन्तु ऐसे अनेक भक्त होते हैं, जो दीक्षा द्वारा ब्राह्मण-पद तक ऊपर उठ जाते हैं। ये लोग *शूद्र महाजन* कहलाते हैं। इसका अर्थ है, वह व्यक्ति जो अब्राह्मण परिवार में उत्पन्न होकर दीक्षा से ब्राह्मण-पद प्राप्त कर लेता है। ऐसे भक्तों ने बलभद्र भट्टाचार्य को आमन्त्रित किया। मायावादी संन्यासी केवल ब्राह्मण परिवार का निमन्त्रण स्वीकार करेगा, किन्तु एक वैष्णव उस ब्राह्मण का निमन्त्रण स्वीकार नहीं करेगा, जो वैष्णव सम्प्रदाय का न हो। किन्तु यदि वह व्यक्ति दीक्षा-प्राप्त वैष्णव है, तो एक वैष्णव ब्राह्मण या शूद्र महाजन का भी निमन्त्रण स्वीकार कर लेगा। श्री चैतन्य महाप्रभु ने स्वयं शूद्र महाजनों का निमन्त्रण स्वीकार किया। इससे इस तथ्य की पुष्टि होती है कि वैष्णव मन्त्र द्वारा दीक्षा-प्राप्त कोई भी व्यक्ति का स्वीकार ब्राह्मण के रूप में किया जा सकता है। ऐसे व्यक्ति का निमन्त्रण स्वीकार किया जा सकता है।

ভট্টাচার্য পাক করে বন্য-ব্যঞ্জন ।
বন্য-ব্যঞ্জনে প্রভুর আনন্দিত মন ॥৬১॥

ভট্টাচার্য্য পাক করে বন্য-ব্যঞ্জন ।
বন্য-ব্যঞ্জনে প্রভুর আনন্দিত মন ॥৬১॥

भट्टाचार्य्य—बलभद्र भट्टाचार्य; **पाक करे**—भोजन पकाता था; **वन्य-व्यञ्जन**—जंगली सब्जियों के सभी प्रकार के व्यंजन; **वन्य-व्यञ्जने**—ऐसी जंगली सब्जियों से; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु का; **आनन्दित मन**—मन प्रसन्न हो जाता।

अनुवाद

बलभद्र भट्टाचार्य जंगल से एकत्र किये गये सभी तरह के साग-सब्जी को पकाता और श्री चैतन्य महाप्रभु इन व्यंजनों को परम प्रसन्न होकर ग्रहण करते थे।

दुई-चारि दिनेर अन्न राखेन संहति ।
याहाँ शून्य वन, लोकेर नाहिक वसति ॥ ६२॥
ताहाँ सेइ अन्न भट्टाचार्य करे पाक ।
फल-मूले व्यञ्जन करे, वन्य नाना शाक ॥ ६३॥

दुइ-चारि दिनेर अन्न राखेन संहति ।
याहाँ शून्य वन, लोकेर नाहिक वसति ॥ ६२॥
ताहाँ सेइ अन्न भट्टाचार्य्य करे पाक ।
फल-मूले व्यञ्जन करे, वन्य नाना शाक ॥ ६३॥

दुइ-चारि—दो चार; **दिनेर**—दिनों का; **अन्न**—अन्न; **राखेन**—रखता; **संहति**—संग्रह करके; **याहाँ**—जहाँ कभी; **शून्य वन**—निर्जन वन; **लोकेर**—लोगों का; **नाहिक**—नहीं होता; **वसति**—निवास; **ताहाँ**—वहाँ; **सेइ**—वही; **अन्न**—अन्न; **भट्टाचार्य्य**—बलभद्र भट्टाचार्य; **करे पाक**—पकाता; **फल-मूले**—मूल और फलों से; **व्यञ्जन करे**—सब्जियाँ तैयार करता; **वन्य**—वन के; **नाना शाक**—नाना प्रकार के शाक।

अनुवाद

बलभद्र भट्टाचार्य दो-चार दिन चल सकने के लिए अन्न का संग्रह कर लेता था। निर्जन स्थान पर वह इसी अन्न को पकाता और जंगल से एकत्र किये हुए साग-सब्जी तथा फल-मूल को खाने के लिए तैयार करता।

परम सन्तोष प्रभुर वन्य-भोजने ।
महा-सुख पान, ये दिन रहेन निर्जने ॥ ६४॥

परम सन्तोष प्रभुर वन्य-भोजने ।
महा-सुख पान, ग्रे दिन रहेन निर्जने ॥ ६४॥

परम—परम; **सन्तोष**—सन्तोष; **प्रभुर**—महाप्रभु को; **वन्य-भोजने**—जंगल से एकत्र की हुईं सब्जियाँ खाने में; **महा-सुख पान**—महा सुख पाया; **ग्रे दिन**—जिस दिन; **रहेन**—ठहरना पड़ा; **निर्जने**—एकान्त स्थान में।

अनुवाद

महाप्रभु इस जंगली साग-सब्जी को खाकर परम सुखी होते और इससे भी अधिक सुखी तब होते जब वे किसी निर्जन स्थान में ठहरते।

ভট্টাচার্য সেবা করে, স্নেহে যৈছে 'দাস' ।
তাঁর বিপ্র বহে জল-পাত্র-বহির্বাস ॥ ৬৫॥

भट्टाचार्य्य सेवा करे, स्नेहे य्रैछे 'दास' ।
ताँर विप्र वहे जल-पात्र-बहिर्वास ॥ ६५॥

भट्टाचार्य्य—बलभद्र भट्टाचार्य; **सेवा करे**—सेवा की; **स्नेहे**—अत्यन्त स्नेह से; **य्रैछे**—ठीक उसी तरह; **दास**—जैसे एक सेवक; **ताँर विप्र**—उसका ब्राह्मण सहायक; **वहे**—उठाता; **जल-पात्र**—जलपात्र; **बहिर्वास**—और वस्त्र।

अनुवाद

बलभद्र भट्टाचार्य महाप्रभु से इतना स्नेह करता कि वह दास की तरह सेवा करता रहता। उसका सहायक ब्राह्मण जलपात्र तथा वस्त्र लिये रहता।

নির্ঝরেতে উষ্ণোদকে স্নান তিন-বার ।
দুই-সন্ধ্যা অগ্নি-তাপ কাষ্ঠের অপার ॥ ৬৬॥

निर्झरिते उष्णोदके स्नान तिन-बार ।
दुइ-सन्ध्या अग्नि-ताप काष्ठेर अपार ॥ ६६॥

निर्झरिते—झरनों में; **उष्ण-उदके**—गरम पानी में; **स्नान**—स्नान; **तिन-बार**—तीन बार; **दुइ-सन्ध्या**—प्रातः और संध्या; **अग्नि-ताप**—अग्नि की गर्मी; **काष्ठेर**—लकड़ी की; **अपार**—असीम।

अनुवाद

महाप्रभु झरने के गरम जल से तीन बार स्नान करते थे। वे प्रातः और सायंकाल प्रचुर लकड़ियों से उत्पन्न अग्नि से अपने आपको गरमाते थे।

निरन्तर प्रेमावेसे निर्जने गमन ।
सुख अनुभवि' प्रभु कहेन वचन ॥ ६७॥

निरन्तर प्रेमावेशे निर्जने गमन ।
सुख अनुभवि' प्रभु कहेन वचन ॥ ६७॥

निरन्तर—सदैव; **प्रेम-आवेशे**—प्रेमावेश में; **निर्जने**—निर्जन स्थान में; **गमन**—जाकर; **सुख अनुभवि'**—सुख अनुभव करके; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **कहेन**—कहे; **वचन**—ये वचन ।

अनुवाद

इस एकान्त जंगल में यात्रा करते हुए और परम सुख का अनुभव करते हुए श्री चैतन्य महाप्रभु ने ये वचन कहे।

शुन, भट्टाचार्य,—"आमि गेलाङ बहु-देश ।
वन-पथे दुःखेर काहाँ नाहि पाइ लेश ॥ ६८॥

शुन, भट्टाचार्य,—"आमि गेलाङ बहु-देश ।
वन-पथे दुःखेर काहाँ नाहि पाइ लेश ॥ ६८॥

शुन—कृपया सुनो; **भट्टाचार्य**—मेरे प्रिय भट्टाचार्य; **आमि**—मैंने; **गेलाङ**—भ्रमण किया है; **बहु-देश**—बहुत देशों में; **वन-पथे**—वन के मार्ग से; **दुःखेर**—दुःख; **काहाँ**—कहीं भी; **नाहि पाइ**—नहीं पाया; **लेश**—तनिक भी।

अनुवाद

"हे भट्टाचार्य, मैंने जंगल से होकर बहुत दूर की यात्रा की है, किन्तु मुझे तनिक भी कष्ट नहीं हुआ है।

कृष्ण—कृपालु, आमाय बहुत कृपा कैला ।
वन-पथे आनि' आमाय बड़ सुख दिला ॥ ६९॥

कृष्ण—कृपालु, आमाय बहुत कृपा कैला ।
वन-पथे आनि' आमाय बड़ सुख दिला ॥ ६९॥

कृष्ण—भगवान् कृष्ण; **कृपालु**—अत्यन्त दयालु; **आमाय**—मुझ पर; **बहुत**—बहुत; **कृपा**—कृपा; **कैला**—दिखाई; **वन-पथे**—वन के मार्ग में; **आनि'**—लाकर; **आमाय**—मुझे; **बड़**—बड़ा; **सुख**—सुख; **दिला**—दिया।

अनुवाद

"कृष्ण मुझ पर विशेष कृपालु हैं। उन्होंने जंगल से होकर जाने वाले इस पथ पर लाकर मुझ पर कृपा दिखलाई है। इस तरह उन्होंने मुझे अत्यधिक आनन्द प्रदान किया है।

पूर्वे वृन्दावन याइते करिलाङ विचार ।
माता, गङ्गा, भक्त-गणे देखिब एक-बार ॥७०॥

पूर्वे वृन्दावन याइते करिलाङ विचार ।
माता, गङ्गा, भक्त-गणे देखिब एक-बार ॥७०॥

पूर्वे—पहले; **वृन्दावन**—वृन्दावन को; **याइते**—जाने का; **करिलाङ**—मैंने किया; **विचार**—विचार; **माता**—माता; **गङ्गा**—गंगा; **भक्त-गणे**—और भक्तों को; **देखिब**—मैं देखूँगा; **एक-बार**—एक बार।

अनुवाद

"इसके पूर्व मैंने वृन्दावन जाने और रास्ते में एक बार फिर से अपनी माता, गंगा नदी तथा अन्य भक्तों को देखने का निश्चय किया था।

भक्त-गण-सङ्गे अवश्य करिब मिलन ।
भक्त-गणे सङ्गे लञा याव 'वृन्दावन' ॥७१॥

भक्त-गण-सङ्गे अवश्य करिब मिलन ।
भक्त-गणे सङ्गे लञा याब 'वृन्दावन' ॥७१॥

भक्त-गण-सङ्गे—अपने सभी भक्तों के संग; **अवश्य**—अवश्य; **करिब**—करूँगा; **मिलन**—मिलन; **भक्त-गणे**—सभी भक्त; **सङ्गे**—साथ; **लञा**—लेकर; **याब**—मैं जाऊँगा; **वृन्दावन**—वृन्दावन धाम को।

अनुवाद

"मैंने सोचा था कि एक बार फिर सभी भक्तों को देखूँगा और उनसे मिलूँगा तथा उन्हें अपने साथ वृन्दावन ले जाऊँगा।

एत भावि' गौड़-देशे करिलुँ गमन ।
माता, गङ्गा भक्ते देखि' सुखी हैल मन ॥७२॥

एत भावि' गौड़-देशे करिलुँ गमन ।
माता, गङ्गा भक्ते देखि' सुखी हैल मन ॥ ७२ ॥

एत भावि'—इस प्रकार विचार करके; **गौड़-देशे**—बंगाल को; **करिलुँ गमन**—मैं गया; **माता**—अपनी माता; **गङ्गा**—गंगा; **भक्ते**—भक्तों को; **देखि'**—देखकर; **सुखी**—प्रसन्न; **हैल**—हो गया; **मन**—मेरा मन।

अनुवाद

"इस तरह मैं बंगाल गया और वहाँ अपनी माता, गंगा नदी तथा भक्तों को देखकर अत्यन्त सुखी हुआ।

ভক্ত-গণে লঞা তবে চলিলাঙ রঙ্গে ।
লক্ষ-কোটি লোক তাহাঁ হৈল আমা-সঙ্গে ॥ ৭৩ ॥

भक्त-गणे लञा तबे चलिलाङ रङ्गे ।
लक्ष-कोटि लोक ताहाँ हैल आमा-सङ्गे ॥ ७३ ॥

भक्त-गणे—सभी भक्त; **लञा**—लेकर; **तबे**—तब; **चलिलाङ रङ्गे**—मैं अत्यन्त आनन्दित होकर चल पड़ा; **लक्ष-कोटि**—कई हजारों लाखों; **लोक**—लोग; **ताहाँ**—वहाँ; **हैल**—हो गये; **आमा-सङ्गे**—मेरे साथ।

अनुवाद

"किन्तु जब मैं वृन्दावन को चलने लगा, तो हजारों, लाखों लोग एकत्रित हो गये और मेरे साथ चलने लगे।

সনাতন-মুখে কৃষ্ণ আমা শিখাইলা ।
তাহা বিঘ্ন করি' বন-পথে লঞা আইলা ॥ ৭৪ ॥

सनातन-मुखे कृष्ण आमा शिखाइला ।
ताहा विघ्न करि' वन-पथे लञा आइला ॥ ७४ ॥

सनातन-मुखे—सनातन के मुख से; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण ने; **आमा**—मुझे; **शिखाइला**—सिखाया; **ताहा**—कि; **विघ्न करि'**—बाधा डालकर; **वन-पथे**—वन मार्ग से; **लञा**—लेकर; **आइला**—आया।

अनुवाद

"इस तरह मैं एक बड़ी भीड़ के साथ वृन्दावन जा रहा था, किन्तु

सनातन के मुख से कृष्ण ने मुझे एक शिक्षा दी। इस तरह कुछ अवरोध डालकर उन्होंने मुझे इस जंगल से होकर जाने वाले वृन्दावन के मार्ग पर ला दिया।

কৃপার সমুদ্র, দীন-হীনে দয়াময় ।
কৃষ্ণ-কৃপা বিনা কোন 'সুখ' নাহি হয়'' ॥৭৫॥

কৃপার সমুদ্র, দীন-হীনে দয়াময় ।
কৃষ্ণ-কৃপা বিনা কোন 'সুখ' নাহি হয়" ॥৭৫॥

कृपार समुद्र—कृपा सागर; **दीन-हीने**—निर्धनों और पतितों पर; **दया-मय**—अत्यन्त दयालु; **कृष्ण-कृपा**—कृष्ण की कृपा; **विना**—बिना; **कोन**—कोई भी; **सुख**—सुख; **नाहि हय**—नहीं मिलता।

अनुवाद

"कृष्ण कृपा के सागर हैं। वे दीन तथा पतितों पर विशेष रूप से दयालु हैं। उनकी कृपा के बिना सुख की कोई सम्भावना नहीं है।"

ভট্টাচার্যে আলিঙ্গিয়া তাঁহারে কহিল ।
'তোমার প্রসাদে আমি এত সুখ পাইল' ॥৭৬॥

ভট্টাচার্য্যে আলিঙ্গিয়া তাঁহারে কহিল ।
'তোমার প্রসাদে আমি এত সুখ পাইল' ॥৭৬॥

भट्टाचार्य्ये—बलभद्र भट्टाचार्य का; **आलिङ्गिया**—आलिंगन करके; **ताँहारे**—उसको; **कहिल**—कहा; **तोमार प्रसादे**—तुम्हारी कृपा से; **आमि**—मुझे; **एत**—इतना; **सुख**—सुख; **पाइल**—मिला।

अनुवाद

तब श्री चैतन्य महाप्रभु ने बलभद्र भट्टाचार्य का आलिंगन किया और उससे कहा, "तुम्हारी कृपा से ही मैं अब इतना सुखी हूँ।"

তেঁহো কহেন,—''তুমি 'কৃষ্ণ', তুমি 'দয়াময়' ।
অধম জীব মুঞি, মোরে হইলা সদয় ॥৭৭॥

तेंहो कहेन,—"तुमि 'कृष्ण', तुमि 'दयामय' ।
अधम जीव मुञि, मोरे हइला सदय ॥ ७७॥

तेंहो कहेन—भट्टाचार्य ने कहा; **तुमि कृष्ण**—आप स्वयं कृष्ण हैं; **तुमि**—आप; **दया-मय**—दयालु; **अधम**—अधम; **जीव**—जीव; **मुञि**—मैं; **मोरे**—मुझ पर; **हइला**—आप हुए हैं; **स-दय**—दयालु।

अनुवाद

बलभद्र भट्टाचार्य ने उत्तर दिया, "हे प्रभु, आप साक्षात् कृष्ण हैं, इसीलिए आप इतने दयालु हैं। मैं तो पतित जीव हूँ, किन्तु आपने मुझ पर अतीव कृपा की है।

मुञि छार, मोरे तुमि सङ्गे लञा आइला ।
कृपा करि' मोर हाते 'प्रभु' भिक्षा कैला ॥७८॥
मुञि छार, मोरे तुमि सङ्गे लञा आइला ।
कृपा करि' मोर हाते 'प्रभु' भिक्षा कैला ॥ ७८॥

मुञि—मैं; **छार**—अत्यन्त पतित; **मोरे**—मुझे; **तुमि**—आप; **सङ्गे**—साथ; **लञा**—लेकर; **आइला**—आये हैं; **कृपा करि'**—कृपा करके; **मोर हाते**—मेरे हाथ से; **प्रभु**—मेरे प्रभु; **भिक्षा कैला**—आपने भोजन स्वीकार किया।

अनुवाद

"हे महोदय, मैं अत्यन्त पतित हूँ, फिर भी आप मुझे अपने साथ ले आये। आपने महती कृपा करके मेरे द्वारा बनाया हुआ भोजन स्वीकार किया है।

अधम-काकेरे कैला गरूड़-समान ।
'स्वतन्त्र ईश्वर' तुमि—स्वयं भगवान्'' ॥७९॥
अधम-काकेरे कैला गरुड़-समान ।
'स्वतन्त्र ईश्वर' तुमि—स्वयं भगवान्" ॥ ७९॥

अधम-काकेरे—नीच कौआ; **कैला**—आपने बनाया है; **गरुड़-समान**—गरुड़ के समान; **स्वतन्त्र**—स्वतन्त्र; **ईश्वर**—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान्; **तुमि**—आप; **स्वयम् भगवान्**—स्वयं मूल परम भगवान् हैं।

अनुवाद

"यद्यपि मैं अधम कौवे से अधिक अच्छा नहीं हूँ, किन्तु आपने मुझे अपना वाहन गरुड़ बनाया है। आप स्वतन्त्र पूर्ण पुरुषोत्तम परमेश्वर हैं—आदि भगवान् हैं।

मूकं करोति वाचालं पङ्गुं लङ्घयते गिरिम् ।
यत्कृपा तमहं वन्दे परमानन्द-माधवम् ॥ ८० ॥

मूकं करोति वाचालं पङ्गुं लङ्घयते गिरिम् ।
यत्कृपा तमहं वन्दे परमानन्द-माधवम् ॥ ८० ॥

मूकम्—गूंगे को; **करोति**—कर देते हैं; **वाचालम्**—वाचाल, बिना अवरोध बोलने वाला; **पङ्गुम्**—लंगड़े को; **लङ्घयते**—पार करवाते हैं; **गिरिम्**—पर्वत; **यत्-कृपा**—जिनकी कृपा; **तम्**—उनको; **अहम्**—मैं; **वन्दे**—नमस्कार करता हूँ; **परम-आनन्द**—परमानन्द; **माधवम्**—माधव, पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान्।

अनुवाद

"'पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् सच्चिदानन्द विग्रह—दिव्य आनन्द, ज्ञान तथा शाश्वतता के मूर्तिमान रूप हैं। मैं उन्हें सादर नमस्कार करता हूँ, जिनकी कृपा से गूँगा वक्ता बन जाता है और लंगड़ा पर्वत को लाँघ जाता है। ऐसी है भगवान् की कृपा।'"

तात्पर्य

यह श्लोक *श्रीमद्भागवत* की श्रीधर स्वामी कृत *भावार्थ-दीपिका-टीका* (१.१.१) से उद्धृत है।

এই-মত বলভদ্র করেন স্তবন ।
প্রেম-সেবা করি' তুষ্ট কৈল প্রভুর মন ॥ ৮১ ॥

এই-মত বলভদ্র করেন স্তবন ।
প্রেম-সেবা করি' তুষ্ট কৈল প্রভুর মন ॥ ৮১ ॥

এই-মত—इस प्रकार; **बलभद्र**—बलभद्र भट्टाचार्य; **करेन**—की; **स्तवन**—स्तुति; **प्रेम-सेवा करि'**—प्रेमभाव से सेवा करके; **तुष्ट**—तुष्ट; **कैल**—किया; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु का; **मन**—मन।

अनुवाद

इस तरह बलभद्र भट्टाचार्य ने महाप्रभु की स्तुति की। उसने प्रेममयी सेवा करके महाप्रभु के मन को तुष्ट किया।

एइ-मत नाना-सुखे प्रभु आइला 'काशी' ।
मध्याह्न-स्नान कैल मणिकर्णिकाय आसि' ॥ ८२ ॥

एइ-मत नाना-सुखे प्रभु आइला 'काशी' ।
मध्याह्न-स्नान कैल मणिकर्णिकाय आसि' ॥ ८२ ॥

एइ-मत—इस प्रकार; **नाना-सुखे**—बहुत सुख से; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **आइला**—आये; **काशी**—काशी नामक तीर्थस्थान में; **मध्याह्न-स्नान**—मध्याह्न स्नान; **कैल**—किया; **मणिकर्णिकाय**—मणिकर्णिका के स्नान घाट पर; **आसि'**—आकर।

अनुवाद

अन्त में महाप्रभु प्रसन्न मन से काशी नामक तीर्थस्थान में आ पहुँचे। वहाँ उन्होंने मणिकर्णिका नामक घाट में स्नान किया।

तात्पर्य

काशी वाराणसी (बनारस) का दूसरा नाम है। यह प्राचीन काल से तीर्थस्थान रहा है। यहाँ पर आसि: तथा वरुणा नामक दो नदियाँ मिलती हैं। मणिकर्णिका इसलिए विख्यात है, क्योंकि यहाँ पर महापुरुषों के मतानुसार भगवान् विष्णु के कान से मणिजटित कान की बाली गिर गई थी। कुछ लोगों का विचार है कि शिवजी के कान की बाली गिरी थी। *मणि* का अर्थ है "रत्न" तथा *कर्णिका* का अर्थ है "कान से।" कुछ लोगों के मतानुसार प्रभु विश्वनाथ बहुत बड़े वैद्य हैं, जो कान में भगवान् राम के नाम की ध्वनि सुनने वाले व्यक्ति के भवरोग का इलाज करके उद्धार करते हैं। इसलिए यह तीर्थस्थान मणिकर्णिका कहलाता है। कहा जाता है कि जहाँ से होकर गंगा नदी बहती है, उससे उत्तम अन्य कोई स्थान नहीं होता और मणिकर्णिका घाट तो विशेष रूप से पवित्र है, क्योंकि यह प्रभु विश्वनाथ को अतीव प्रिय है। *काशीखण्ड* में कहा गया है—

संसारिचिन्तामणिरत्र यस्मात्
तारकं सज्जनकर्णिकायाम्।
शिवोऽभिधत्ते सहसान्तकाले
तद् गीयतेऽसौ मणिकर्णिकेति।
मुक्तिलक्ष्मी महापीठमणिस्तच्चरणाब्जयोः।
कर्णिकेयं ततः प्राहुर्यां जना मणिकर्णिकाम्॥

काशीखण्ड के इस परिच्छेद के अनुसार यदि मनुष्य मणिकर्णिका में शरीर-त्याग करता है, तो वह शिवजी के नाम का स्मरण करने मात्र से ही मुक्ति लाभ करता है।

সেই-কালে তপন-মিশ্র করে গঙ্গা-স্নান ।
প্রভু দেখি' হৈল তাঁর কিছু বিস্ময় জ্ঞান ॥৮৩॥
सेइ-काले तपन-मिश्र करे गङ्गा-स्नान ।
प्रभु देखि' हैल ताँर किछु विस्मय ज्ञान ॥८३॥

सेइ-काले—उस समय; **तपन-मिश्र**—तपन मिश्र नामक ब्राह्मण; **करे गङ्गा-स्नान**—गंगा स्नान कर रहे थे; **प्रभु देखि'**—महाप्रभु को देखकर; **हैल**—हुआ; **ताँर**—उन्हें; **किछु**—कुछ; **विस्मय ज्ञान**—आश्चर्य।

अनुवाद

उस समय तपन मिश्र गंगा में स्नान कर रहे थे। वे महाप्रभु को वहाँ देखकर विस्मित हुए।

'পূর্বে শুনিয়াছি প্রভু কর্যাছেন সন্ন্যাস' ।
নিশ্চয় করিয়া হৈল হৃদয়ে উল্লাস ॥৮৪॥
'पूर्वे शुनियाछि प्रभु कर्याछेन सन्यास' ।
निश्चय करिया हैल हृदये उल्लास ॥८४॥

पूर्वे—पूर्व काल में; **शुनियाछि**—मैंने सुना है; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **कर्याछेन सन्यास**—संन्यास लिया है; **निश्चय करिया**—निश्चय करके; **हैल**—था; **हृदये**—हृदय में; **उल्लास**—उल्लास, अत्यन्त हर्ष।

अनुवाद

तब तपन मिश्र सोचने लगे, "मैंने सुना है कि श्री चैतन्य महाप्रभु ने संन्यास ग्रहण कर लिया है।" यह सोचकर तपन मिश्र मन ही मन अत्यन्त प्रफुल्लित हुए।

प्रभुर चरण धरि' करेन रोदन ।
प्रभु तारे उठाञा कैल आलिङ्गन ॥ ८५ ॥

प्रभुर चरण धरि' करेन रोदन ।
प्रभु तारे उठाञा कैल आलिङ्गन ॥ ८५ ॥

प्रभुर—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **चरण**—चरणकमल; **धरि'**—पकड़कर; **करेन**—किया; **रोदन**—रोने लगा; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **तारे**—उसको; **उठाञा**—उठाकर; **कैल**—किया; **आलिङ्गन**—आलिंगन।

अनुवाद

फिर उन्होंने श्री चैतन्य महाप्रभु के चरणकमल पकड़ लिये और रुदन करने लगे। महाप्रभु ने उन्हें उठाकर उनका आलिंगन किया।

प्रभु लञा गेला विश्वेश्वर-दरशने ।
तबे आसि' देखे विन्दु-माधव-चरणे ॥ ८६ ॥

प्रभु लञा गेला विश्वेश्वर-दरशने ।
तबे आसि' देखे बिन्दु-माधव-चरणे ॥ ८६ ॥

प्रभु लञा—महाप्रभु को लेकर; **गेला**—वे गये; **विश्वेश्वर-दरशने**—विश्वेश्वर मन्दिर में दर्शन करने; **तबे**—तब; **आसि'**—आकर; **देखे**—देखा; **बिन्दु-माधव-चरणे**—बिन्दु माधव के चरणकमल।

अनुवाद

तब तपन मिश्र श्री चैतन्य महाप्रभु को विश्वेश्वर मन्दिर में दर्शन करने ले गये। वहाँ से आते हुए दोनों ने बिन्दु माधव के चरणकमलों का दर्शन किया।

तात्पर्य

बिन्दु माधव मन्दिर वाराणसी का सबसे पुराना विष्णु मन्दिर है। आजकल

यह वेणी माधव कहलाता है और गंगा नदी के तट पर स्थित है। पहले यहाँ पाँच नदियाँ मिलती थीं, जिनके नाम थे—धूतपापा, किरणा, सरस्वती, गंगा तथा यमुना। अब केवल गंगा नदी दिखती है। श्री चैतन्य महाप्रभु ने जिस बिन्दु माधव के प्राचीन मन्दिर को देखा था, उसे बाद में मुगल वंश के कट्टर हिन्दु-विरोधी सम्राट औरंगजेब ने तुड़वा दिया और उसके स्थान पर एक बहुत बड़ी मस्जिद बनवा दी। बाद में इसी मस्जिद के बगल में एक दूसरा मन्दिर बनवाया गया, जो आज भी विद्यमान है। बिन्दु माधव मन्दिर में चतुर्भुजी नारायण तथा देवी लक्ष्मी के अर्चाविग्रह हैं। इनके समक्ष श्री गरुड़-स्तम्भ और अगल-बगल राम, सीता, लक्ष्मण तथा हनुमानजी के विग्रह हैं।

महाराष्ट्र प्रदेश में सतारा नाम की रियासत है। श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर के समय वहाँ का राजकुमार वैष्णव सम्प्रदाय का था। ब्राह्मण होने के नाते उसने अर्चाविग्रह की पूजा का भार सँभाला। उसका नाम श्रीमन्त बालासाहेब पन्थ महाराज था। वह रियासत आज भी मन्दिर के रख-रखाव का खर्च देती है। इस वंश के प्रथम राजा महाराज जगतजीवन राव साहेब ने २०० वर्ष पूर्व मन्दिर में पूजा करने का भार अपने ऊपर ले लिया।

घरे लञा आइला प्रभुके आनन्दित हञा ।
सेवा करि' नृत्य करे वस्त्र उड़ाञा ॥ ८७॥

घरे लञा आइला प्रभुके आनन्दित हञा ।
सेवा करि' नृत्य करे वस्त्र उड़ाञा ॥ ८७॥

घरे लञा—अपने घर; **आइला**—ले आया; **प्रभुके**—श्री चैतन्य महाप्रभु को; **आनन्दित हञा**—अति प्रसन्न होकर; **सेवा करि'**—सेवा की; **नृत्य करे**—नाचने लगे; **वस्त्र उड़ाञा**—अपना वस्त्र हिलाते हुए।

अनुवाद

तपन मिश्र खुशी-खुशी श्री चैतन्य महाप्रभु को अपने घर ले आये और उनकी सेवा करने लगे। वे अपने वस्त्र लहराकर नृत्य करने लगे।

प्रभुर चरणोदक सवंशे कैल पान ।
भट्टाचार्येर पूजा कैल करिया सम्मान ॥ ८८॥

प्रभुर चरणोदक सवंशे कैल पान ।
भट्टाचार्य्येर पूजा कैल करिया सम्मान ॥ ८८ ॥

प्रभुर—श्री चैतन्य महाप्रभु का; **चरण-उदक**—चरणकमलों को धोने में लगा जल; **स-वंशे**—आपने सारे परिवार सहित; **कैल पान**—पिया; **भट्टाचार्य्येर**—भट्टाचार्य की; **पूजा**—पूजा; **कैल**—की; **करिया**—दिखाते हुए; **सम्मान**—सम्मान।

अनुवाद

उन्होंने श्री चैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों को धोया और बाद में उस चरणोदक को उन्होंने स्वयं तथा पूरे परिवार ने पिया। उन्होंने बलभद्र भट्टाचार्य की भी पूजा की और सम्मान किया।

प्रभुरे निमन्त्रण करि' घरे भिक्षा दिल ।
बलभद्र-भट्टाचार्ये पाक कराइल ॥ ८९ ॥
प्रभुरे निमन्त्रण करि' घरे भिक्षा दिल ।
बलभद्र-भट्टाचार्य्ये पाक कराइल ॥ ८९ ॥

प्रभुरे निमन्त्रण करि'—महाप्रभु को निमंत्रण करके; **घरे**—घर पर; **भिक्षा दिल**—भोजन दिया; **बलभद्र-भट्टाचार्य्ये**—बलभद्र भट्टाचार्य से; **पाक कराइल**—भोजन बनवाया।

अनुवाद

तपन मिश्र ने श्री चैतन्य महाप्रभु को अपने घर में भोजन करने के लिए आमन्त्रित किया और बलभद्र भट्टाचार्य को भोजन बनाने का काम सौंप दिया।

तात्पर्य

वाराणसी (बनारस) में श्री चैतन्य महाप्रभु तपन मिश्र के घर ठहरे। तपन मिश्र के घर के पास ही पंचनदी घाट था, जहाँ श्री चैतन्य महाप्रभु नित्य स्नान करते थे और बिन्दु माधव के मन्दिर जाया करते थे। फिर वे तपन मिश्र के घर पर भोजन करते थे। बिन्दु माधव मन्दिर के पास एक विशाल वटवृक्ष है। कहा जाता है कि इसके नीचे महाप्रभु भोजन के बाद विश्राम किया करते थे। वही वटवृक्ष आज तक चैतन्य-वट के नाम से प्रसिद्ध है। भाषा में परिवर्तन के साथ उसका नाम अब यतनवट बन गया है। स्थानीय लोग इसे अभी भी यतनवट ही कहते हैं।

इस समय एक गली से सटी हुई वल्लभाचार्य की समाधि है, किन्तु इसका कोई चिह्न नहीं है कि श्री चैतन्य महाप्रभु वहाँ किसी समय रहे थे। वल्लभाचार्य भी अपने शिष्यों में महाप्रभु के नाम से जाने जाते थे। सम्भवत: श्री चैतन्य महाप्रभु यतनवट पर रहे, किन्तु न तो चन्द्रशेखर, न ही तपन मिश्र के घर का कोई चिह्न है और न ही मायावादी संन्यासी प्रकाशानन्द सरस्वती का कोई चिह्न है, जिसके साथ महाप्रभु ने *वेदान्त-सूत्र* पर शास्त्रार्थ किया था। यतनवट से थोड़ी ही दूरी पर कलकत्ता के शशिभूषण नियोगी महाशय द्वारा स्थापित गौर-नित्यानन्द का मन्दिर है। श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती के समय में इस मन्दिर की व्यवस्था शशिभूषण की सास तथा साले नारायणचन्द्र घोष द्वारा की जाती थी।

ভিক্ষা করি' মহাপ্রভু করিলা শয়ন ।
মিশ্র-পুত্র রঘু করে পাদ-সম্বাহন ॥৯০॥

भिक्षा करि' महाप्रभु करिला शयन ।
मिश्र-पुत्र रघु करे पाद-सम्वाहन ॥९०॥

भिक्षा करि'—भोजन करने के बाद; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **करिला शयन**—विश्राम किया; **मिश्र-पुत्र**—तपन मिश्र के पुत्र; **रघु**—रघु ने; **करे**—किया; **पाद-सम्वाहन**—पाँव दबाए।

अनुवाद

भोजन के बाद जब श्री चैतन्य महाप्रभु विश्राम करने लगे, तब तपन मिश्र के पुत्र रघु ने उनके पाँव दबाये।

প্রভুর 'শেষান্ন' মিশ্র সবংশে খাইল ।
'প্রভু আইলা' শুনি' চন্দ্রশেখর আইল ॥৯১॥

प्रभुर 'शेषान्न' मिश्र सवंशे खाइल ।
'प्रभु आइला' शुनि' चन्द्रशेखर आइल ॥९१॥

प्रभुर—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **शेष-अन्न**—भोजन का अवशेष; **मिश्र**—तपन मिश्र; **स-वंशे**—अपने परिवार सहित; **खाइल**—खाया; **प्रभु आइला**—महाप्रभु आये हैं; **शुनि'**—सुनकर; **चन्द्रशेखर आइल**—चन्द्रशेखर आया।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु द्वारा छोड़े गये भोजन को तपन मिश्र के सारे परिवार ने ग्रहण किया। जब महाप्रभु के आने का समाचार फैल गया, तो चन्द्रशेखर भी उन्हें मिलने आये।

মিশ্রের সখা তেঁহো প্রভুর পূর্ব দাস ।
বৈদ্য-জাতি, লিখন-বৃত্তি, বারাণসী-বাস ॥৯২॥

मिश्रेर सखा तेंहो प्रभुर पूर्व दास ।
वैद्य-जाति, लिखन-वृत्ति, वाराणसी-वास ॥ ९२॥

मिश्रेर सखा—तपन मिश्र के मित्र; **तेंहो**—वह; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **पूर्व दास**—पुराने दास; **वैद्य-जाति**—वैद्य जाति के; **लिखन-वृत्ति**—पेशे से क्लर्क (मुनीम); **वाराणसी-वास**—वाराणसी के निवासी।

अनुवाद

चन्द्रशेखर तपन मिश्र के मित्र थे और श्री चैतन्य महाप्रभु अपने दास के रूप में उन्हें बहुत पहले से जानते थे। वे जाति के वैद्य थे, किन्तु मुनीम का पेशा करते थे। उस समय वे वाराणसी में रह रहे थे।

আসি' প্রভু-পদে পড়ি' করেন রোদন ।
প্রভু উঠি' তাঁরে কৃপায় কৈল আলিঙ্গন ॥৯৩॥

आसि' प्रभु-पदे पड़ि' करेन रोदन ।
प्रभु उठि' ताँरे कृपाय कैल आलिङ्गन ॥ ९३॥

आसि'—आकर; **प्रभु-पदे**—श्री चैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों पर; **पड़ि'**—गिरकर; **करेन**—किया; **रोदन**—रोदन; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **उठि'**—खड़े होकर; **ताँरे**—उसको; **कृपाय**—कृपा करके; **कैल**—किया; **आलिङ्गन**—आलिंगन।

अनुवाद

चन्द्रशेखर वहाँ आकर श्री चैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों पर गिरकर रोने लगे। महाप्रभु ने खड़े होकर अपनी अहैतुकी कृपावश उनका आलिंगन किया।

চন্দ্রশেখর কহে,—"প্রভু, বড় কৃপা কৈলা ।
আপনে আসিয়া ভৃত্যে দরশন দিলা ॥ ৯৪ ॥

चन्द्रशेखर कहे,—"प्रभु, बड़ कृपा कैला ।
आपने आसिया भृत्ये दरशन दिला ॥ ९४ ॥

चन्द्रशेखर कहे—चन्द्रशेखर ने कहा; **प्रभु**—मेरे प्रिय प्रभु; **बड़ कृपा कैला**—आपने अपनी अहैतुकी कृपा की है; **आपने**—स्वयं; **आसिया**—आकर; **भृत्ये**—आपने दास को; **दरशन दिला**—अपना दर्शन दिया।

अनुवाद

चन्द्रशेखर ने कहा, "हे प्रभु, आपने मुझ पर अपनी अहैतुकी कृपा प्रदर्शित की है, क्योंकि मैं आपका पुराना सेवक हूँ। निस्सन्देह, आप मुझे दर्शन देने के लिए यहाँ पधारे हैं।

আপন-প্রারব্ধে বসি' বারাণসী-স্থানে ।
'মায়া', 'ব্রহ্ম' শব্দ বিনা নাহি শুনি কাণে ॥ ৯৫ ॥

आपन-प्रारब्धे वसि' वाराणसी-स्थाने ।
'माया', 'ब्रह्म' शब्द विना नाहि शुनि काणे ॥ ९५ ॥

आपन-प्रारब्धे—मेरे पूर्व कर्मों के कारण; **वसि'**—रहकर; **वाराणसी-स्थाने**—वाराणसी में; **माया**—माया; **ब्रह्म**—और ब्रह्म; **शब्द**—शब्द; **विना**—के सिवा; **नाहि शुनि**—मैं नहीं सुनता हूँ; **काणे**—कान में ।

अनुवाद

"मैं अपने विगत कर्मों के कारण वाराणसी में रह रहा हूँ, किन्तु यहाँ पर मैं 'माया' तथा 'ब्रह्म' शब्दों के अतिरिक्त और कुछ नहीं सुनता।"

तात्पर्य

इस श्लोक में *प्रारब्धे* (विगत कर्म) महत्त्वपूर्ण शब्द है। भक्त होने के कारण चन्द्रशेखर कृष्ण तथा उनकी दिव्य लीलाओं के विषय में सुनने के लिए सदैव उत्सुक रहते थे। किन्तु बनारस के अधिकांश निवासी निर्विशेषवादी, शिव-उपासक तथा पंचोपासना-विधि के अनुयायी थे और अब भी हैं। निर्विशेषवादी लोग निराकार ब्रह्म के किसी रूप की कल्पना करते हैं और ध्यान लगाने में सुविधा के लिए वे विष्णु, शिव, गणेश, सूर्य तथा देवी दुर्गा के

रूपों पर अपने चित्त को एकाग्र करते हैं। वस्तुत: ये पंचोपासक किसी के भक्त नहीं होते। ठीक ही कहा गया है कि हर एक का दास होने का अर्थ है, किसी का भी दास न होना। वाराणसी अथवा काशी निर्विशेषवादियों का मुख्य तीर्थस्थल है और यह भक्तों के लिए तनिक भी उपयुक्त नहीं है। एक वैष्णव तो ऐसे स्थान में रहना चाहता है, जहाँ विष्णु के मन्दिर हों (*विष्णुतीर्थ*)। वाराणसी में शिवजी के सौंकडों और हजारों मन्दिर अर्थात् पंचोपासक मन्दिर हैं। इसलिए चैतन्य महाप्रभु से बात करते हुए चन्द्रशेखर ने असन्तोष व्यक्त किया कि विगत दुष्कर्मों के कारण ही उन्हें बनारस में रहना पड़ रहा है। *भक्तिरसामृतसिन्धु* में भी कहा गया है—*दुर्जात्यारम्भकं पापं यत्स्यात् प्रारब्धमेवतत्*—मनुष्य को अपने विगत दुष्कर्मों के फलस्वरूप ही निम्न स्तर में जन्म लेना पड़ता है।" किन्तु *ब्रह्म-संहिता* (५.५४) में कहा गया है—*कर्माणि निर्दहति किन्तु च भक्तिभाजाम्*—"भक्ति करने वाले के लिए विगत कर्मों या दुष्कर्मों के साथ कर्मफल नहीं बना रहता।" भक्त पर कर्मफल का प्रभाव नहीं होता। कर्मफल कर्मियों पर लागू होता है, भक्तों पर नहीं।

भक्त तीन प्रकार के होते हैं—*नित्यसिद्ध,* जो सदा दिव्य स्तर पर होते हैं; *साधनसिद्ध,* जो भक्तिमयी सेवा के आचरण के कारण दिव्य स्तर पर ऊपर उठ जाते हैं; तथा *साधक,* जो नौसिखिए होते हैं और सिद्धि की ओर अग्रसर हो रहे होते हैं। साधकगण धीरे-धीरे कर्मफल से मुक्त होते जाते हैं। *भक्तिरसामृतसिन्धु* (१.१.१७) में भक्तियोग के लक्षणों का वर्णन इस प्रकार मिलता है :

क्लेशघ्नी शुभदा मोक्षलघुताकृत सुदुर्लभा।
सान्द्रानन्द-विशेषात्मा श्रीकृष्णाकर्षिणी च सा॥

भक्ति नौसिखियों के लिए भी *क्लेशघ्नी* है। इसका अर्थ यह है कि यह सभी प्रकार के कष्टों को कम कर देती है या नष्ट कर देती है। *शुभदा* शब्द बतलाता है कि भक्ति सर्व सौभाग्य प्रदान करने वाली है और *कृष्ण-आकर्षिणी* शब्द बतलाता है कि भक्ति कृष्ण को धीरे-धीरे भक्त की ओर आकृष्ट करती है। फलस्वरूप भक्त पर पाप का कर्मफल लागू नहीं होता। *भगवद्गीता* (१८.६६) में कृष्ण कहते हैं :

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः॥

"सभी प्रकार के धर्मों को त्यागकर मेरी शरण में आओ। मैं तुम्हें सारे पापों के कर्मफलों से उबार लूँगा। डरो मत।"

इस तरह पूर्ण शरणागत निष्ठावान भक्त को तुरन्त ही सारे पापों के फलों से मुक्ति मिल जाती है। पापों के फलीभूत होने की तीन अवस्थाएँ हैं। पहली अवस्था में मनुष्य पापकर्म करता है। किन्तु इसके पूर्व इस कर्म का बीज उपस्थित होता है और उससे भी पूर्व अज्ञान रहता है, जिसके कारण मनुष्य पाप करता है। इन तीनों अवस्थाओं में कष्ट निहित होता है। किन्तु कृष्ण अपने भक्त पर कृपालु रहते हैं, फलस्वरूप वे पाप, पापबीज तथा पाप कराने वाले अज्ञान—इन तीनों अवस्थाओं को तुरन्त नष्ट कर देते हैं। *पद्मपुराण* से इसकी पुष्टि होती है :

अप्रारब्ध फलं पापं कूटं बीजं फलोन्मुखम्।
क्रमेणैव प्रलीयेत विष्णुभक्तिरतात्मनाम्॥

इसकी अधिक व्याख्या के लिए *भक्तिरसामृतसिन्धु* देखना चाहिए।

षड्-दर्शन-व्याख्या विना कथा नाहि एथा ।
मिश्र कृपा करि' मोरे शुनान कृष्ण-कथा ॥९६॥

षड्-दर्शन-व्याख्या विना कथा नाहि एथा ।
मिश्र कृपा करि' मोरे शुनान कृष्ण-कथा ॥ ९६ ॥

षट्-दर्शन—षट् दर्शन; **व्याख्या**—व्याख्या; **विना**—के अतिरिक्त; **कथा**—बातचीत (चर्चा); **नाहि**—नहीं; **एथा**—यहाँ; **मिश्र**—तपन मिश्र; **कृपा करि'**—कृपा करके; **मोरे**—मुझे; **शुनान**—सुनाता है (व्याख्या करता है); **कृष्ण-कथा**—भगवान् कृष्ण की कथा।

अनुवाद

चन्द्रशेखर ने आगे कहा, "वाराणसी में छः दर्शनों की व्याख्या के अतिरिक्त कोई दूसरी बात नहीं होती। इतने पर भी तपन मिश्र मुझ पर बहुत कृपालु हैं, क्योंकि वे कृष्ण सम्बन्धी कथाएँ सुनाते हैं।

तात्पर्य

छः दर्शन हैं (१) *वैशेषिक*—कणाद ऋषि द्वारा प्रतिपादित, (२) *न्याय*—गौतम ऋषि द्वारा प्रतिपादित, (३) *योग*—पतंजलि ऋषि द्वारा प्रतिपादित, (४) *सांख्य*—कपिल ऋषि द्वारा प्रतिपादित, (५) *कर्ममीमांसा*—जैमिनि ऋषि द्वारा प्रतिपादित तथा (६) *ब्रह्ममीमांसा* या *वेदान्त,* परम सत्य का अन्तिम निर्णय (*जन्माद्यस्य यतः*)—वेदव्यास द्वारा प्रतिपादित। वस्तुतः वेदान्त दर्शन भक्तों के निमित्त है, क्योंकि *भगवद्गीता* (१५.१५) में भगवान् कृष्ण कहते हैं—*वेदान्तकृद्वेदविदेव चाहम्*—"मैं वेदान्त का संकलन-कर्ता और समस्त वेदों का ज्ञाता हूँ।" वेदव्यास कृष्ण के अवतार हैं, अतएव कृष्ण ही वेदान्त दर्शन के संकलन-कर्ता हैं। अतः कृष्ण स्पष्ट रूप से वेदान्त दर्शन को जानते हैं। *भगवद्गीता* में कहा गया है कि जो भी कृष्ण से वेदान्त दर्शन सुनता है, वह वेदान्त के सही अर्थ को वास्तव में जानता है। मायावादी अपने आपको वेदान्ती कहते हैं, किन्तु वे वेदान्त दर्शन के तात्पर्य को बिल्कुल ही नहीं समझते। ठीक से शिक्षित न होने के कारण सामान्य लोग वेदान्त का अर्थ शांकर-भाष्य मानते हैं।

निरन्तर दुँहे चिन्ति तोमार चरण ।
'सर्वज्ञ ईश्वर' तुमि दिला दरशन ॥९७॥

निरन्तर दुँहे चिन्ति तोमार चरण ।
'सर्वज्ञ ईश्वर' तुमि दिला दरशन ॥ ९७॥

निरन्तर—सदैव; **दुँहे**—हम दोनों; **चिन्ति**—ध्यान करते हैं; **तोमार चरण**—आपके चरणकमलों का; **सर्व-ज्ञ**—सर्वज्ञ; **ईश्वर**—पूर्ण पुरूषोत्तम भगवान्; **तुमि**—आपने; **दिला दरशन**—अपने दर्शन दिये।

अनुवाद

"हे प्रभु, हम दोनों निरन्तर आपके चरणकमलों का चिन्तन करते हैं। यद्यपि आप सर्वज्ञ पूर्ण पुरूषोत्तम भगवान् हैं, तथापि आपने हमें अपना दर्शन दिया है।

শুনি,—'মহাপ্রভু' যাবেন শ্রী-বৃন্দাবনে ।
দিন কত রহি' তার' ভৃত্য দুই-জনে'' ॥৯৮॥

শুনি,—'মহাপ্রভু' যাবেন শ্রী-বৃন্দাবনে ।
দিন কত রহি' তার' ভৃত্য দুই-জনে" ॥৯৮॥

শুনি—মैंने सुना है; **মহাপ্রভু**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **যাবেন**—जायेंगे; **শ্রী-বৃন্দাবনে**—वृन्दावन को; **দিন কত**—कुछ दिनों के लिए; **রহি'**—रहकर; **তার'**—कृपया उद्धार करें; **ভৃত্য**—सेवकों; **দুই-জনে**—दोनों का।

अनुवाद

"हे प्रभु, मैंने सुना है कि आप वृन्दावन जा रहे हैं। कृपया वाराणसी में कुछ दिन रहकर आप हमारा उद्धार कर दें, क्योंकि हम दोनों आपके सेवक हैं।"

तात्पर्य

यद्यपि चन्द्रशेखर महाप्रभु के नित्य सेवक हैं, फिर भी उन्होंने विनम्र भाव से पतित के रूप में अपने आपको प्रस्तुत किया। अत: उन्होंने महाप्रभु से अपने तथा तपन मिश्र दोनों के उद्धार के लिए प्रार्थना की, जो उनके सेवक थे।

মিশ্র কহে,—'প্রভু, যাবত্কাশীতে রহিবা ।
মোর নিমন্ত্রণ বিনা অন্য না মানিবা' ॥৯৯॥

মিশ্র কহে,—'প্রভু, যাবত্কাশীতে রহিবা ।
মোর নিমন্ত্রণ বিনা অন্য না মানিবা' ॥৯৯॥

মিশ্র কহে—तपन मिश्र ने कहा; **প্রভু**—मेरे प्रभु; **যাবত্**—जब तक; **কাশীতে রহিবা**—आप काशी (वाराणसी) में रहेंगे; **মোর নিমন্ত্রণ**—मेरे निमंत्रण के; **বিনা**—बिना; **অন্য**—अन्य किसी का; **না মানিবা**—स्वीकार न करें।

अनुवाद

तब तपन मिश्र ने कहा, "हे प्रभु, आप जब तक वाराणसी में रहें, आप कृपया मेरे अतिरिक्त अन्य किसी का निमन्त्रण स्वीकार न करें।"

এই-মত মহাপ্রভু দুই ভৃত্যের বশে ।
ইচ্ছা নাহি, তবু তথা রহিলা দিন-দশে ॥ ১০০ ॥

এइ-মত মহাপ্রভু দুइ ভৃত্যের বশে ।
ইচ্ছা নাহি, তবু তথা রহিলা দিন-দশে ॥ ১০০ ॥

এइ-মত—इस प्रकार; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **दुइ**—दो; **भृत्येर**—सेवकों से; **वशे**—वश होकर; **इच्छा नाहि**—ऐसी कोई इच्छा नहीं थी; **तबु**—तथापि; **तथा**—वहाँ; **रहिला**—रहे; **दिन-दशे**—दस दिन तक।

अनुवाद

अपने इन दो सेवकों की प्रार्थनाओं से वश होकर महाप्रभु वाराणसी में दस दिनों तक रहे, यद्यपि उनकी कोई ऐसी योजना नहीं थी।

মহারাষ্ট্রীয় বিপ্র আইসে প্রভু দেখিবারে ।
প্রভুর রূপ-প্রেম দেখি' হয় চমৎকারে ॥ ১০১ ॥

মহারাষ্ট্রীয় বিপ্র আইসে প্রভু দেখিবারে ।
প্রভুর রূপ-প্রেম দেখি' হয় চমৎকারে ॥ ১০১ ॥

महाराष्ट्रीय—महाराष्ट्र राज्य का; **विप्र**—एक ब्राह्मण; **आइसे**—आया; **प्रभु देखिबारे**—श्री चैतन्य महाप्रभु का दर्शन करने; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु का; **रूप-प्रेम**—रूप और प्रेम; **देखि'**—देखकर; **हय चमत्कारे**—चकित रह गया।

अनुवाद

वाराणसी में महाराष्ट्र का रहने वाला एक ब्राह्मण था, जो नित्य ही श्री चैतन्य महाप्रभु का दर्शन करने आता था। वह ब्राह्मण महाप्रभु के सौन्दर्य तथा कृष्ण-प्रेम को देखकर अतीव चकित था।

বিপ্র সব নিমন্ত্রয়, প্রভু নাহি মানে ।
প্রভু কহে,—'আজি মোর হঞাছে নিমন্ত্রণে' ॥ ১০২ ॥

বিপ্র সব নিমন্ত্রয়, প্রভু নাহি মানে ।
প্রভু কহে,—'আজি মোর হঞাছে নিমন্ত্রণে' ॥ ১০২ ॥

विप्र—ब्राह्मण; **सब**—सब; **निमन्त्रय**—निमन्त्रण देते; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **नाहि**

माने—नहीं स्वीकार करते; **प्रभु कहे**—महाप्रभु उत्तर देते; **आजि**—आज; **मोर**—मेरा; **हञाछे**—हो गया है; **निमन्त्रणे**—निमन्त्रण।

अनुवाद

जब वाराणसी के ब्राह्मण महाप्रभु को भोजन पर निमन्त्रित करते, तो वे उनका निमन्त्रण स्वीकार नहीं करते थे। वे यह उत्तर देते, "मैं पहले से अन्यत्र निमन्त्रित हूँ।"

এই-মত প্রতি-দিন করেন বঞ্চন ।
সন্ন্যাসীর সঙ্গ-ভয়ে না মানেন নিমন্ত্রণ ॥১০৩॥

এइ-মত প্রতি-দিন করেন বঞ্চন ।
সন্ন্যাসীর সঙ্গ-ভয়ে না মানেন নিমন্ত্রণ ॥ ১০৩ ॥

এइ-মত—इस प्रकार; **প্রতি-দিন**—प्रतिदिन; **করেন বঞ্চন**—अन्य निमन्त्रकों को मना कर देते; **সন্ন্যাসীর**—मायावादी संन्यासियों की; **সঙ্গ-ভয়ে**—संगति के भय से; **না মানেন**—नहीं स्वीकार करते थे; **নিমন্ত্রণ**—निमन्त्रण।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु प्रतिदिन लोगों के निमन्त्रण अस्वीकार करते रहते थे, क्योंकि वे मायावादी संन्यासियों की संगति से डरते थे।

तात्पर्य

वैष्णव संन्यासी उस समूह का आमन्त्रण स्वीकार नहीं करता, जो मायावादी संन्यासियों तथा वैष्णव संन्यासियों को एक ही मानता है। दूसरे शब्दों में, वैष्णव संन्यासियों को मायावादी संन्यासियों की संगति करना तनिक भी नहीं भाता, उनके साथ भोजन करना तो दूर रहा। कृष्णभावनामृत आन्दोलन के संन्यासियों को इस सिद्धान्त का पालन करना चाहिए। यह आदेश श्री चैतन्य महाप्रभु ने अपने निजी आचरण से दिया है।

প্রকাশানন্দ শ্রীপাদ সভাতে বসিয়া ।
'বেদান্ত' পড়ান বহু শিষ্য-গণ লঞা ॥১০৪॥

প্রকাশানন্দ শ্রীপাদ সভাতে বসিয়া ।
'বেদান্ত' পড়ান বহু শিষ্য-গণ লঞা ॥ ১০৪ ॥

प्रकाशानन्द—प्रकाशानन्द; **श्रीपाद**—एक महान् संन्यासी; **सभाते**—सभा में; **वसिया**—बैठकर; **वेदान्त**—वेदान्त दर्शन का; **पड़ान**—उपदेश देते थे; **बहु**—बहुत से; **शिष्य-गण**—शिष्य; **लञा**—लेकर।

अनुवाद

वहाँ प्रकाशानन्द सरस्वती नामक एक महान् मायावादी संन्यासी थे, जो अपने अनुयायियों की एक बहुत बड़ी सभा को वेदान्त-दर्शन पढ़ाया करते थे।

तात्पर्य

श्रीपाद प्रकाशानन्द सरस्वती एक मायावादी संन्यासी थे, जिनके गुणों का वर्णन *चैतन्य-भागवत* (मध्यखण्ड, अध्याय ३) में किया गया है :

'हस्त' 'पद' 'मुख' मोर नाहिक 'लोचन'।
वेद मोर एइ-मत करे विडम्बन।
काशीते पड़ाय वेटा 'प्रकाश-आनन्द'।
सेइ वेटा करे मोर अंग खण्ड-खण्ड॥
वाखानये वेद, मोर विग्रह ना माने।
सर्वांगे हइल कुष्ठ, तबु नाहि जाने।
सर्व यज्ञमय मोर ये -अंग—पवित्र।
'अज', 'भव' आदि गाय याँहार चरित्र॥
'पुण्य' पवित्रता पाय ये -अंग-परशे।
ताहा 'मिथ्या' बले वेटा केमन साहसे॥

मध्यखण्ड, अध्याय २० में कहा गया है :

संन्यासी 'प्रकाशानन्द' वसये काशीते।
मोरे खण्ड-खण्ड वेटा करे भाल-मते॥
पड़ाय 'वेदान्त' मोर 'विग्रह' ना माने।
कुष्ठ कराइलुँ अंगे, तबु नाहि जाने॥
'सत्य' मोर 'लीलाकर्म' 'सत्य' मोर 'स्थान'।
इहा 'मिथ्या' बले, मोरे करे खान्-खान्॥

निर्विशेषवादी होने के कारण प्रकाशानन्द सरस्वती परम सत्य की व्याख्या

उन्हें हाथ, पैर मुख या आँखों से विहीन बताकर करते थे। इस तरह वे ईश्वर के साकार रूप को न मानकर लोगों को ठगा करते थे। ऐसे मूर्ख थे—प्रकाशानन्द सरस्वती। उनका एकमात्र कार्य रह गया था, भगवान् को निर्विशेष बतलाकर भगवान् के अंगों को काटना। यद्यपि भगवान् का स्वरूप होता है, किन्तु प्रकाशानन्द सरस्वती भगवान् के हाथों तथा पाँवों को काट डालना चाहते थे। यह तो असुरों का कार्य है। वेदों का कहना है कि जो लोग भगवान् के स्वरूप को स्वीकार नहीं करते, वे मूढ़ हैं। भगवान् का स्वरूप वास्तविक है, जैसाकि श्रीकृष्ण ने *भगवद्गीता* (१५.१५) में कहा है—*वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्यः।* जब कृष्ण *अहम्* कहते हैं, तो उसका अर्थ होता है, "मैं," अर्थात् एक व्यक्ति। *एव* शब्द जोड़ने से उसकी पुष्टि होती है। इस प्रकार वेदान्त-दर्शन द्वारा परम पुरुष को जाना जाता है। जो कोई भी वैदिक ज्ञान को निर्विशेष बतलाता है, वह असुर है। भगवान् के स्वरूप की पूजा करके मनुष्य जीवन में सफल बनता है। मायावादी संन्यासी उन भगवान् के साकार रूप को अस्वीकार करते हैं, जो पतितात्माओं के उद्धारकर्ता हैं। मायावादी असुर इस स्वरूप को काटकर खण्ड-खण्ड कर देने का प्रयास करते हैं।

भगवान् की पूजा तो ब्रह्माजी तथा शिवजी जैसे उन्नत देवता भी करते हैं। प्रथम मायावादी संन्यासी शंकराचार्य ने भी यह हकीकत का स्वीकार किया है कि भगवान् का स्वरूप दिव्य होता है : *नारायणः परोऽव्यक्तात्*—"पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् नारायण अव्यक्त अर्थात् अप्रकट भौतिक शक्ति के परे हैं।" *अव्यक्तात् अण्डसम्भवः*—"यह भौतिक जगत् उस अव्यक्त भौतिक शक्ति की सृष्टि है।" किन्तु नारायण का अपना सनातन स्वरूप है, जो भौतिक शक्ति द्वारा उत्पन्न नहीं हुआ है। भगवान् के स्वरूप की पूजा करने मात्र से ही मनुष्य शुद्ध हो जाता है। किन्तु मायावादी संन्यासी निर्विशेषवादी दार्शनिक होते हैं और वे भगवान् के स्वरूप को *माया* अर्थात् मिथ्या बतलाते हैं। भला किसी मिथ्या वस्तु की पूजा करने से कोई शुद्ध कैसे बन सकता है? मायावादी दार्शनिकों के पास निर्विशेषवादी बनने का पर्याप्त कारण नहीं है। वे ऐसे सिद्धान्त का अन्धा पालन करते हैं, जिसका समर्थन तर्क द्वारा नहीं हो सकता। बनारस के मुख्य मायावादी संन्यासी प्रकाशानन्द की यही स्थिति थी। उनसे वेदान्त दर्शन की

शिक्षा देने की आशा की जाती थी, किन्तु वे भगवान् के स्वरूप को स्वीकार नहीं करते थे, अतः उन्हें कोढ़ हो गया। तो भी वे परम सत्य को निर्विशेष बतलाकर पाप पर पाप करते रहे। यद्यपि परम सत्य, पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् सदैव अपनी लीलाएँ प्रदर्शित करते हैं, किन्तु मायावादी सन्यासियों का दावा है कि ये लीलाएँ मिथ्या हैं।

कुछ लोग यह झूठा दावा करते हैं कि प्रकाशानन्द सरस्वती ही बाद में प्रबोधानन्द सरस्वती कहलाये। किन्तु यह सही नहीं है। प्रबोधानन्द सरस्वती गोपाल भट्ट गोस्वामी के चाचा तथा गुरु थे। प्रबोधानन्द सरस्वती अपने गृहस्थ जीवन में श्री रंगक्षेत्र के निवासी थे और वे रामानुज वैष्णव सम्प्रदाय से सम्बन्धित थे। प्रकाशनन्द सरस्वती तथा प्रबोधानन्द सरस्वती को एक ही व्यक्ति मानना भूल होगी।

एक विप्र देखि' आइला प्रभुर व्यवहार ।
प्रकाशानन्द-आगे कहे चरित्र ताँहार ॥ १०५ ॥

एक विप्र देखि' आइला प्रभुर व्यवहार ।
प्रकाशानन्द-आगे कहे चरित्र ताँहार ॥ १०५ ॥

एक विप्र—एक ब्राह्मण; **देखि'**—देखकर; **आइला**—आया; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु का; **व्यवहार**—व्यवहार; **प्रकाशानन्द-आगे**—मायावादी संन्यासी प्रकाशानन्द के समक्ष; **कहे**—कहा; **चरित्र ताँहार**—उनके लक्षण।

अनुवाद

एक ब्राह्मण जिसने श्री चैतन्य महाप्रभु के विचित्र व्यवहार को देखा था, वह प्रकाशानन्द सरस्वती के पास आया और उसने महाप्रभु के गुणों का बखान किया।

"एक सन्न्यासी आइला जगन्नाथ हैते ।
ताँहार महिमा-प्रताप ना पारि वर्णिते ॥ १०६ ॥

"एक सन्न्यासी आइला जगन्नाथ हैते ।
ताँहार महिमा-प्रताप ना पारि वर्णिते ॥ १०६ ॥

एक—एक; **सन्न्यासी**—संन्यासी; **आइला**—आया है; **जगन्नाथ हैते**—जगन्नाथ पुरी से; **ताँहार**—उसकी; **महिमा**—महिमा; **प्रताप**—प्रताप; **ना पारि वर्णिते**—मैं वर्णन नहीं कर सकता।

अनुवाद

उस ब्राह्मण ने प्रकाशानन्द सरस्वती से कहा, "जगन्नाथ पुरी से एक संन्यासी आया है, जिसके अद्भुत प्रभाव तथा यश का वर्णन करने में मैं असमर्थ हूँ।

सकल देखिये ताँते अद्भुत-कथन ।
प्रकाण्ड-शरीर, शुद्ध-काञ्चन-वरण ॥१०७॥
सकल देखिये ताँते अद्भुत-कथन ।
प्रकाण्ड-शरीर, शुद्ध-काञ्चन-वरण ॥१०७॥

सकल देखिये—मैं हर चीज देखता हूँ; **ताँते**—उसमें; **अद्भुत-कथन**—अद्भुत वर्णन; **प्रकाण्ड-शरीर**—प्रकाण्ड शरीर; **शुद्ध**—शुद्ध; **काञ्चन**—स्वर्ण जैसा; **वरण**—रंग-रूप, वर्ण।

अनुवाद

"उस संन्यासी की हर वस्तु निराली है। उसका शरीर सुगठित तथा अत्यलंकृत है और उसका रंग विशुद्ध सोने के समान है।

आजानु-लम्बित भुज, कमल-नयन ।
यत किछु ईश्वरेर सर्व सल्लक्षण ॥१०८॥
आजानु-लम्बित भुज, कमल-नयन ।
यत किछु ईश्वरेर सर्व सल्लक्षण ॥१०८॥

आजानु-लम्बित—घुटनों तक लम्बी; **भुज**—भुजाएँ; **कमल-नयन**—कमल के समान नयन; **यत**—जितने; **किछु**—कुछ; **ईश्वरेर**—पूर्ण पुरूषोत्तम भगवान् के; **सर्व**—सभी; **सत्-लक्षण**—दिव्य लक्षण।

अनुवाद

"उसकी भुजाएँ घुटने तक लम्बी हैं और उसकी आँखें कमल की पंखुड़ियों जैसी हैं। उसके शरीर में पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के सारे लक्षण हैं।

তাহা দেখি' জ্ঞান হয়—'এই নারায়ণ ।
যেই তাঁরে দেখে, করে কৃষ্ণ-সঙ্কীর্তন ॥ ১০৯ ॥

তাহা দেখি' জ্ঞান হয়—'এই নারায়ণ ।
যেই তাঁরে দেখে, করে কৃষ্ণ-সঙ্কীর্তন ॥ ১০৯ ॥

তাহা দেখি'—वह देखकर; **জ্ঞান হয়**—पता लगता है; **এই নারায়ণ**—वह नारायण भगवान् स्वयं है; **যেই**—कोई भी जो कोई; **তাঁরে**—उसको; **দেখে**—देखता है; **করে**—करता है; **কৃষ্ণ-সঙ্কীর্তন**—कृष्ण के पावन नाम का संकीर्तन।

अनुवाद

"जो भी उसके ये लक्षण देखता है, वह उसे साक्षात् नारायण मानने लगता है। जो भी उसे देखता है, वह तुरन्त कृष्ण-नाम का कीर्तन करने लगता है।

'মহা-ভাগবত'-লক্ষণ শুনি ভাগবতে ।
সে-সব লক্ষণ প্রকট দেখিয়ে তাঁহাতে ॥ ১১০ ॥

'মহা-ভাগবত'-লক্ষণ শুনি ভাগবতে ।
সে-সব লক্ষণ প্রকট দেখিয়ে তাঁহাতে ॥ ১১০ ॥

মহা-ভাগবত—महान् भक्त के; **লক্ষণ**—लक्षण; **শুনি**—हम सुनते हैं; **ভাগবতে**—*श्रीमद्भागवत* में; **সে-সব লক্ষণ**—वे सब लक्षण; **প্রকট**—प्रकट; **দেখিয়ে**—मैं देखता हूँ; **তাঁহাতে**—उसमें।

अनुवाद

"हमने श्रीमद्भागवत में *महाभागवत* के जो-जो लक्षण सुने हैं, वे सभी लक्षण श्री चैतन्य महाप्रभु के शरीर में प्रकट हैं।

'নিরন্তর কৃষ্ণ-নাম' জিহ্বা তাঁর গায় ।
দুই-নেত্রে অশ্রু বহে গঙ্গা-ধারা-প্রায় ॥ ১১১ ॥

'নিরন্তর কৃষ্ণ-নাম' জিহ্বা তাঁর গায় ।
দুই-নেত্রে অশ্রু বহে গঙ্গা-ধারা-প্রায় ॥ ১১১ ॥

নিরন্তর—निरन्तर; **কৃষ্ণ-নাম**—कृष्ण का पवित्र नाम; **জিহ্বা**—जीभ; **তাঁর**—उसकी;

गाय—गाती है; **दुइ-नेत्रे**—दोनों नेत्रों में; **अश्रु**—अश्रु; **वहे**—बहते हैं; **गङ्गा-धारा-प्राय**—गंगा की धारा की भाँति।

अनुवाद

"उसकी जीभ निरन्तर कृष्ण के पवित्र नाम का कीर्तन करती है और उसकी आँखों से आँसू गंगा की धारा की तरह निरन्तर बहते रहते हैं।

क्षणे नाचे, हासे, गाय, करये क्रन्दन ।
क्षणे हुङ्कार करे,—सिंहेर गर्जन ॥११२॥

क्षणे नाचे, हासे, गाय, करये क्रन्दन ।
क्षणे हुहुङ्कार करे,—सिंहेर गर्जन ॥११२॥

क्षणे—कभी; **नाचे**—नाचता है; **हासे**—हँसता है; **गाय**—गाता है; **करये क्रन्दन**—रोता है; **क्षणे**—कभी; **हुहुँ-कार**—उँची ध्वनि; **करे**—करता है; **सिंहेर गर्जन**—सिंह की तरह गर्जन।

अनुवाद

"कभी वह नाचता है, हँसता है, गाता है, रोता है और कभी सिंह की तरह गर्जना करता है।

जगत्मङ्गल ताँर 'कृष्ण-चैतन्य'-नाम ।
नाम, रूप, गुण ताँर, सब—अनुपम ॥११३॥

जगत्मङ्गल ताँर 'कृष्ण-चैतन्य'-नाम ।
नाम, रूप, गुण ताँर, सब—अनुपम ॥११३॥

जगत्-मङ्गल—सारे जगत् के लिए शुभ; **ताँर**—उसका; **कृष्ण-चैतन्य**—कृष्ण चैतन्य; **नाम**—नाम; **नाम**—नाम; **रूप**—रूप; **गुण**—गुण; **ताँर**—उसके; **सब**—सब; **अनुपम**—अद्वितीय।

अनुवाद

"उसका नाम कृष्ण चैतन्य है, जो सारे जगत् के लिए शुभ है। उसका सब कुछ—नाम, रूप तथा गुण सभी अद्वितीय हैं।

देखिले से जानि ताँर 'ईश्वरेर रीति' ।
अलौकिक कथा शुनि' के करे प्रतीति?'' ॥११४॥

देखिले से जानि ताँर 'ईश्वरेर रीति' ।
अलौकिक कथा शुनि' के करे प्रतीति?" ॥ ११४॥

देखिले—देखने मात्र से; **से**—उसको; **जानि**—पता पड़ता है; **ताँर**—उसके; **ईश्वरेर रीति**—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के लक्षण; **अलौकिक**—अलौकिक; **कथा**—कथा; **शुनि'**—सुनकर; **के**—कौन; **करे प्रतीति**—विश्वास करेगा।

अनुवाद

"उसे देखने से ही जान पड़ता है कि उसमें पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के सारे गुण विद्यमान हैं। ऐसे गुण निश्चित रूप से असामान्य हैं। भला इन पर कौन विश्वास करेगा?"

शुनिया प्रकाशानन्द बहुत हासिला ।
विप्रे उपहास करि' कहिते लागिला ॥ ११५॥

शुनिया प्रकाशानन्द बहुत हासिला ।
विप्रे उपहास करि' कहिते लागिला ॥ ११५॥

शुनिया—सुनकर; **प्रकाशानन्द**—प्रकाशानन्द सरस्वती; **बहुत हासिला**—बहुत जोर से हंसे; **विप्रे**—ब्राह्मण का; **उपहास करि'**—परिहास करके; **कहिते लागिला**—कहने लगे।

अनुवाद

यह विवरण सुनकर प्रकाशानन्द सरस्वती खूब हँसे। उस ब्राह्मण का उपहास करते हुए वे इस तरह बोले।

श्लोक १७.११६

"शुनियाछि गौड़-देशेर सन्न्यासी—'भावुक' ।
केशव-भारती-शिष्य, लोक-प्रतारक ॥ ११६॥

"शुनियाछि गौड़-देशेर सन्न्यासी—'भावुक' ।
केशव-भारती-शिष्य, लोक-प्रतारक ॥ ११६॥

शुनियाछि—मैंने सुना है; **गौड़-देशेर सन्न्यासी**—बंगाल से संन्यासी; **भावुक**—भावुक; **केशव-भारती-शिष्य**—केशव भारती का शिष्य; **लोक-प्रतारक**—प्रथम श्रेणी का ढोंगी।

अनुवाद

प्रकाशानन्द सरस्वती ने कहा, "हाँ, मैंने भी उसके विषय में सुना है। वह बंगाल से आया हुआ संन्यासी है और अत्यन्त भावुक है। मैंने यह भी

सुना है कि वह भारती सम्प्रदाय का है, क्योंकि वह केशव भारती का शिष्य है। किन्तु वह केवल ढोंगी है।

तात्पर्य

श्री चैतन्य महाप्रभु को *भावुक* माना जाता था, क्योंकि वे सदैव भाव दशा में रहते थे। चूँकि वे कृष्ण के प्रति प्रेम प्रदर्शित करते थे, अत: मूर्ख लोग उन्हें भावुक मानते थे। भौतिक जगत् में तथाकथित भक्त कभी-कभी भाव-लक्षण प्रकट करते हैं। चैतन्य महाप्रभु के भावमय प्रेम की तुलना उन नकली भाव-प्रदर्शकों से नहीं की जा सकती। ऐसे प्रदर्शन अधिक काल तक नहीं चलते। वे क्षणिक होते हैं। हमने अपनी आँखों से देखा है कि नकली भाव प्रकट करने वाले ऐसे ढोंगी कुछ लक्षण दिखाने के बाद तुरन्त ही बीड़ी-सिगरेट पीने लगते हैं। प्रारम्भ में जब प्रकाशानन्द सरस्वती ने श्री चैतन्य महाप्रभु के कार्यकलापों के विषय में सुना, तो वे उन्हें किसी बनावटी व्यक्ति के कार्यकलाप मान बैठे। फलत: उन्होंने महाप्रभु को *लोकप्रतारक* अर्थात् बनावटी व्यक्ति कहा। मायावादी लोग भक्त द्वारा व्यक्त किये जाने वाले दिव्य लक्षणों को नहीं समझ सकते। अत: जब ऐसे लक्षण प्रकट होते हैं, तब मायावादी लोग उनकी तुलना क्षणिक भावावेश से करने लगते हैं। फिर भी प्रकाशानन्द सरस्वती का कथन अपराध-पूर्ण है; अत: उन्हें पाषण्डी (नास्तिक) समझना चाहिए। श्रील रूप गोस्वामी के अनुसार प्रकाशानन्द सरस्वती भगवद्भक्ति में नहीं लगे थे, अत: उनका संन्यास *फल्गु-संन्यास* था। चूँकि वे भगवान् की सेवा में वस्तुओं का उपयोग करना नहीं जानते थे, अत: उनका संसार से वैराग्य बनावटी था।

'চৈতন্য'-নাম তাঁর, ভাবুক-গণ লঞা ।
দেশে দেশে গ্রামে গ্রামে বুলে নাচাঞা ॥ ১১৭ ॥

'चैतन्य'-नाम ताँर, भावुक-गण लञा ।
देशे देशे ग्रामे ग्रामे बुले नाचाञा ॥ ११७ ॥

चैतन्य—चैतन्य; **नाम ताँर**—उसका नाम; **भावुक-गण लञा**—कुछ भावुकों के साथ; **देशे देशे**—देश देश में; **ग्रामे ग्रामे**—गाँव से गाँव; **बुले**—घूमता है; **नाचाञा**—नचाते हुए।

अनुवाद

प्रकाशानन्द सरस्वती ने आगे कहा : "मैं जानता हूँ कि उसका नाम चैतन्य है और उसके साथ अनेक भावुक लोग रहते हैं। उसके अनुयायी उसके साथ नाचते हैं और एक देश से दूसरे देश तथा एक गाँव से दूसरे गाँव में जाते रहते हैं।

যেই তাঁরে দেখে, সেই ঈশ্বর করি' কহে ।
ঐছে মোহন-বিদ্যা—যে দেখে সে মোহে ॥ ১১৮॥

য়েই তাঁরে দেখে, সেই ঈশ্বর করি' কহে ।
ঐছে মোহন-বিদ্যা—য়ে দেখে সে মোহে ॥ ११८॥

য়েই—जो कोई; **তাঁরে**—उसको; **দেখে**—देखता है; **সেই**—वही व्यक्ति; **ঈশ্বর করি'**—पूर्ण पुरूषोत्तम भगवान् की भाँति; **কহে**—मानता है; **ঐছে**—ऐसी; **মোহন-বিদ্যা**—तांत्रिक विद्या; **য়ে দেখে**—जो देखता है; **সে মোহে**—वह मोहित हो जाता है।

अनुवाद

"जो भी उसे देखता है, वह उसे पूर्ण पुरूषोत्तम भगवान् के रूप में स्वीकार कर लेता है। चूँकि वह अपनी योगशक्ति से लोगों को सम्मोहित करता है, अत: जो भी उसे देखता है, वह मोहित हो जाता है।

সার্বভৌম ভট্টাচার্য—পণ্ডিত প্রবল ।
শুনি' চৈতন্যের সঙ্গে হইল পাগল ॥ ১১৯॥

সার্বভৌম ভট্টাচার্য্য—পণ্ডিত প্রবল ।
শুনি' চৈতন্যের সঙ্গে হইল পাগল ॥ ११९॥

সার্বভৌম ভট্টাচার্য্য—सार्वभौम भट्टाचार्य; **পণ্ডিত প্রবল**—एक प्रकांड विद्वान; **শুনি'**—मैंने सुना है; **চৈতন্যের সঙ্গে**—चैतन्य के संग में; **হইল পাগল**—पागल हो गया है।

अनुवाद

"सार्वभौम भट्टाचार्य बहुत बड़े विद्वान थे, किन्तु मैंने सुना है कि वे भी इस चैतन्य की संगति से पागल हो गये हैं।

'সন্ন্যাসী'—নাম-মাত্র, মহা-ইন্দ্রজালী! ।
'কাশীপুরে' না বিকাবে তাঁর ভাবকালি ॥১২০॥

'सन्न्यासी'—नाम-मात्र, महा-इन्द्रजाली! ।
'काशीपुरे' ना विकाबे ताँर भावकालि ॥ १२० ॥

सन्न्यासी—संन्यासी; **नाम-मात्र**—केवल नाम का; **महा-इन्द्रजाली**—महा जादूगर; **काशीपुरे**—काशी में; **ना विकाबे**—नहीं बिकेगा, प्रभाव नहीं करेगा; **ताँर**—उसकी; **भावकालि**—भावुक गतिविधियाँ।

अनुवाद

"यह चैतन्य केवल नाम का संन्यासी है। वास्तव में यह एक बहुत बड़ा जादूगर है। जो भी हो, काशी में उसकी भावुकता की माँग अधिक नहीं होगी।

'বেদান্ত' শ্রবণ কর, না যাইহ তাঁর পাশ ।
উচ্ছৃঙ্খল-লোক-সঙ্গে দুই-লোক-নাশ'' ॥১২১॥

'वेदान्त' श्रवण कर, ना याइह ताँर पाश ।
उच्छृङ्खल-लोक-सङ्गे दुइ-लोक-नाश" ॥ १२१ ॥

वेदान्त—वेदान्त दर्शन; **श्रवण कर**—सुनते रहो; **ना**—नहीं; **याइह**—जाओ; **ताँर पाश**—उसके पास; **उच्छृङ्खल**—उच्छुंखल; **लोक**—लोगों; **सङ्गे**—के संग; **दुइ-लोक-नाश**—इस लोक और परलोक का नाश।

अनुवाद

"तुम चैतन्य को मिलने मत जाना। तुम वेदान्त सुनते रहो। यदि तुम ऐसे उच्छृंखल लोगों का संग करोगे, तो तुम्हारा यह लोक तथा परलोक दोनों नष्ट हो जायेंगे।"

तात्पर्य

इस श्लोक में *उच्छृंखल* शब्द सूचक है, जिसका अर्थ है "मनमौजी"। *भगवद्गीता* (१६.२३) में कृष्ण कहते हैं :

यः शास्त्र विधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः ।
न स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न परां गतिम् ॥

जो व्यक्ति उद्दंडतापूर्वक कार्य करता है और शास्त्रीय नियमों का पालन नहीं करता, उसे कभी भी सिद्धि, सुख या वैकुण्ठ प्राप्त नहीं होता।"

এত শুনি' সেই বিপ্র মহা-দুঃখ পাইলা ।
'কৃষ্ণ' 'কৃষ্ণ' কহি' তথা হৈতে উঠি' গেলা ॥ ১২২ ॥

एत शुनि' सेइ विप्र महा-दुःख पाइला ।
'कृष्ण' 'कृष्ण' कहि' तथा हैते उठि' गेला ॥ १२२ ॥

एत शुनि'—यह सुनकर; **सेइ विप्र**—वह ब्राह्मण; **महा-दुःख पाइला**—बहुत दुःखी हुआ; **कृष्ण कृष्ण कहि'**—भगवान् कृष्ण का पावन नाम बोलता हुआ; **तथा हैते**—वहाँ से; **उठि' गेला**—उठकर चला गया।

अनुवाद

जब उस ब्राह्मण ने प्रकाशानन्द सरस्वती को श्री चैतन्य महाप्रभु के विषय में इस तरह कहते सुना, तो वह अत्यन्त दुःखी हुआ। वह कृष्ण कृष्ण कहता हुआ वहाँ से तुरन्त चला गया।

প্রভুর দরশনে শুদ্ধ হঞাছে তাঁর মন ।
প্রভু-আগে দুঃখী হঞা কহে বিবরণ ॥ ১২৩ ॥

प्रभुर दरशने शुद्ध हञाछे ताँर मन ।
प्रभु-आगे दुःखी हञा कहे विवरण ॥ १२३ ॥

प्रभुर दरशने—श्री चैतन्य महाप्रभु के दर्शन करके; **शुद्ध**—शुद्ध; **हञाछे**—हो गया था; **ताँर मन**—उसका मन; **प्रभु-आगे**—महाप्रभु के समक्ष; **दुःखी हञा**—अत्यन्त दुःखी होकर; **कहे विवरण**—घटनाओं का वर्णन किया।

अनुवाद

उस ब्राह्मण का चित्त भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु का दर्शन करने के कारण पहले से शुद्ध हो चुका था। अतः वह श्री चैतन्य महाप्रभु के पास गया और प्रकाशानन्द सरस्वती के सामने जो कुछ हुआ था, उन्हें कह सुनाया।

শুনি' মহাপ্রভু তবে ঈষৎ হাসিলা ।
পুনরপি সেই বিপ্র প্রভুরে পুছিলা ॥ ১২৪ ॥

शुनि' महाप्रभु तबे ईषत् हासिला ।
पुनरपि सेइ विप्र प्रभुरे पुछिला ॥ १२४ ॥

शुनि'—सुनकर; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **तबे**—तब; **ईषत्**—धीरे से; **हासिला**—हँसे; **पुनरपि**—दोबारा; **सेइ**—उस; **विप्र**—ब्राह्मण ने; **प्रभुरे पुछिला**—श्री चैतन्य महाप्रभु से पूछा।

अनुवाद

यह सुनकर श्री चैतन्य महाप्रभु थोड़ा मुस्कुराये। तब वह ब्राह्मण महाप्रभु से पुनः बोला।

"তার আগে যবে আমি তোমার নাম লইল ।
সেহ তোমার নাম জানে,—আপনে কহিল ॥ ১২৫ ॥

"तार आगे यबे आमि तोमार नाम लइल ।
सेह तोमार नाम जाने,—आपने कहिल ॥ १२५ ॥

तार आगे—उसके सामने; **यबे**—जब; **आमि**—मैंने; **तोमार**—आपका; **नाम**—नाम; **लइल**—बोला; **सेह**—वह; **तोमार**—आपका; **नाम**—नाम; **जाने**—जानता था; **आपने कहिल**—उसने स्वयं कहा।

अनुवाद

उस ब्राह्मण ने कहा, "ज्योंही मैंने उसके सामने आपके नाम का उच्चारण किया, त्योंही उसने इस बात की पुष्टि की कि वह आपके नाम को जानता है।

তোমার 'দোষ' কহিতে করে নামের উচ্চার ।
'চৈতন্য' 'চৈতন্য' করি' কহে তিন-বার ॥ ১২৬ ॥

तोमार 'दोष' कहिते करे नामेर उच्चार ।
'चैतन्य' 'चैतन्य' करि' कहे तिन-बार ॥ १२६ ॥

तोमार दोष—आपका दोष; **कहिते**—कहते हुए; **करे**—किया; **नामेर**—नाम का;

उच्चार—उच्चारण; **चैतन्य चैतन्य**—"चैतन्य, चैतन्य"; **करि'**—करके; **कहे तिन-बार**—उसने तीन बार किया।

अनुवाद

"आपके दोषों को गिनाते हुए उसने तीन बार 'चैतन्य' 'चैतन्य' 'चैतन्य' उच्चारण करके आपके नाम का उच्चारण किया।

तिन-बारे 'कृष्ण-नाम' ना आइल तार मुखे ।
'अवज्ञा'ते नाम लय, शुनि' पाइ दुःखे ॥ १२७॥

तिन-बारे 'कृष्ण-नाम' ना आइल तार मुखे ।
'अवज्ञा'ते नाम लय, शुनि' पाइ दुःखे ॥ १२७॥

तिन-बारे—तीन बार; **कृष्ण-नाम**—कृष्ण का पावन नाम; **ना आइल**—नहीं आया; **तार मुखे**—उसके मुख में; **अवज्ञाते**—तिरस्कार रूप में; **नाम लय**—आपका नाम लिया; **शुनि'**—सुनकर; **पाइ दुःखे**—मुझे बहुत दुःख हुआ।

अनुवाद

"यद्यपि उसने आपका नाम तीन बार लिया, किन्तु 'कृष्ण' का नाम एक बार भी नहीं लिया। चूँकि उसने तिरस्कार करके आपका नाम लिया, अतएव मुझे बहुत दुःख हुआ।

तात्पर्य

प्रकाशानन्द सरस्वती ने श्री चैतन्य महाप्रभु को नीचा दिखाने के लिए ही निन्दा की थी। ब्रह्म, चैतन्य, आत्मा, परमात्मा, जगदीश, ईश्वर, विराट्, विभु, भूमा, विश्वरूप तथा व्यापक शब्द अपरोक्ष रूप से कृष्ण के ही सूचक हैं। किन्तु इन नामों का उच्चारण करने वाला पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् कृष्ण तथा उनकी दिव्य लीलाओं के प्रति वास्तव में आकृष्ट नहीं होता। इन नामों से थोड़ा सा आलोक तो प्राप्त होता है, किन्तु मनुष्य यह नहीं समझ सकता कि भगवान् का नाम पवित्र भगवान् से अभिन्न है। अल्पज्ञान के कारण वह भगवान् के नाम को भौतिक मानता है। मायावादी दार्शनिक एवं पंचोपासक आध्यात्मिक जगत् वैकुण्ठ के अस्तित्व तथा वहाँ की आनन्दमय विविधता के विषय में तनिक भी नहीं समझ सकते। वे परम सत्य तथा उनकी आध्यात्मिक विविधता अर्थात् उनके नाम, रूप, गुण, लीलाओं को नहीं समझ सकेंगे। फलतः वे कृष्ण के

दिव्य कार्यों को *माया* मानते हैं। इसीलिए इस भ्रान्त धारणा से बचने के लिए मनुष्य को भगवान् के पवित्र मान के प्रत्यक्ष ज्ञान को विकसित करना चाहिए। मायावादी दार्शनिक यह बात नहीं जानते, अतएव वे बड़े अपराध करते हैं। अतः मनुष्य को मायावादी निर्विशेषवादियों के मुख से कृष्ण या भक्ति के विषय में कुछ भी नहीं सुनना चाहिए।

ইহার কারণ মোরে কহ কৃপা করি' ।
তোমা দেখি' মুখ মোর বলে 'কৃষ্ণ' 'হরি''' ॥ ১২৮॥

इहार कारण मोरे कह कृपा करि' ।
तोमा देखि' मुख मोर बले 'कृष्ण' 'हरि'" ॥ १२८॥

इहार—इसका; **कारण**—कारण; **मोरे**—मुझे; **कह**—कृपया बताएँ; **कृपा करि'**—अपनी अहैतुकी दया से; **तोमा देखि'**—आपको देखकर; **मुख**—मुख; **मोर**—मेरा; **बले**—कहता है; **कृष्ण हरि**—'कृष्ण' और 'हरि' के पावन नाम।

अनुवाद

"आखिर प्रकाशानन्द ने 'कृष्ण' तथा 'हरि' के नाम क्यों नहीं लिए? उसने 'चैतन्य' नाम का तीन बार उच्चारण किया। मैं तो आपको देखकर ही 'कृष्ण' तथा 'हरि' नामों का उच्चारण करने के लिए प्रेरित हो जाता हूँ।"

প্রভু কহে,—"মায়াবাদী কৃষ্ণে অপরাধী ।
'ব্রহ্ম', 'আত্মা,' 'চৈতন্য' কহে নিরবধি ॥ ১২৯॥

प्रभु कहे,—"मायावादी कृष्णे अपराधी ।
'ब्रह्म', 'आत्मा,' 'चैतन्य' कहे निरवधि ॥ १२९॥

प्रभु कहे—श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा; **मायावादी**—मायावादी; **कृष्णे**—कृष्ण के; **अपराधी**—महान् अपराधी; **ब्रह्म**—ब्रह्म; **आत्मा**—आत्मा; **चैतन्य**—चैतन्य; **कहे**—कहते हैं; **निरवधि**—सदैव।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने उत्तर दिया, "मायावादी निर्विशेषवादी लोग

भगवान् कृष्ण के सबसे बड़े अपराधी हैं। इसीलिए वे मात्र 'ब्रह्म,' 'आत्मा' तथा 'चैतन्य' शब्दों का उच्चारण करते हैं।

অতএব তার মুখে না আইসে কৃষ্ণ-নাম ।
'কৃষ্ণ-নাম', 'কৃষ্ণ-স্বরূপ'—দুইত 'সমান' ॥ ১৩০ ॥

অতএব তার মুখে না আইসে কৃষ্ণ-নাম ।
'কৃষ্ণ-নাম', 'কৃষ্ণ-স্বরূপ'—দুইত 'সমান' ॥ ১৩০ ॥

अतएव—इसलिए; **तार मुखे**—उनके मुखों में; **ना**—नहीं; **आइसे**—प्रकट होता; **कृष्ण-नाम**—"कृष्ण" का पावन नाम; **कृष्ण-नाम**—"कृष्ण" का पावन नाम; **कृष्ण-स्वरूप**—"कृष्ण" का स्वरूप; **दुइत समान**—दोनों समान हैं।

अनुवाद

"'कृष्ण' का पवित्र नाम उनके मुखों पर नहीं आता, क्योंकि वे भगवान् कृष्ण, जो अपने नाम से अभिन्न हैं, उनके प्रति अपराधी हैं।

'নাম', 'বিগ্রহ', 'স্বরূপ'—তিন এক-রূপ ।
তিনে 'ভেদ' নাহি,—তিন 'চিদানন্দ-রূপ' ॥ ১৩১ ॥

'নাম', 'বিগ্রহ', 'স্বরূপ'—তিন এক-রূপ ।
তিনে 'ভেদ' নাহি,—তিন 'চিদানন্দ-রূপ' ॥ ১৩১ ॥

नाम—नाम; **विग्रह**—विग्रह; **स्वरूप**—स्वरूप; **तिन**—ये तीनों; **एक-रूप**—एकरूप; **तिने**—तीनों में; **भेद नाहि**—अन्तर नहीं है; **तिन**—ये तीनों; **चित्-आनन्द-रूप**—दिव्य आनन्दमय हैं।

अनुवाद

"भगवान् का पवित्र नाम, उनका विग्रह और उनका स्वरूप—ये तीनों एक हैं। इनमें कोई अन्तर नहीं है। चूँकि ये सभी परम पूर्ण हैं, अतः ये चिदानन्द स्वरूप अर्थात् दिव्य रूप से आनन्दमय हैं।

দেহ-দেহীর, নাম-নামীর কৃষ্ণে নাহি 'ভেদ' ।
জীবের ধর্ম—নাম-দেহ-স্বরূপে 'বিভেদ' ॥ ১৩২ ॥

देह-देहीर, नाम-नामीर कृष्णे नाहि 'भेद' ।
जीवेर धर्म—नाम-देह-स्वरूपे 'विभेद' ॥ १३२ ॥

देह-देहीर—शरीर और शरीर का मालिक (देह और देही); **नाम-नामीर**—नाम और नाम का स्वामी; **कृष्णे**—कृष्ण में; **नाहि भेद**—भेद नहीं है; **जीवेर धर्म**—बद्ध जीव की स्थिति; **नाम**—नाम; **देह**—तन; **स्वरूपे**—भौतिक रूप; **विभेद**—विभेद।

अनुवाद

"कृष्ण के शरीर तथा स्वयं कृष्ण में या उनके नाम तथा स्वयं उनमें कोई अन्तर नहीं है। किन्तु जहाँ तक बद्धजीव का सवाल है, उसका नाम उसके शरीर से, उसके मूल स्वरूप आदि से भिन्न होता है।

तात्पर्य

यहाँ पर श्री चैतन्य महाप्रभु उस ब्राह्मण से कह रहे हैं कि ये मायावादी दार्शनिक यह नहीं समझ सकते कि जीव गुण में पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के समान है। वे इसे स्वीकार नहीं करते, इसलिए वे सोचते हैं कि जीव माया द्वारा बद्ध होने के कारण मूल ब्रह्म से विभाजित हो गया। मायावादियों का विश्वास है कि परम सत्य अन्ततः निर्विशेष है। जब भी ईश्वर का अवतार या स्वयं ईश्वर प्रकट होते हैं, तब मायावादी लोग उन्हें माया से आवृत मानते हैं। दूसरे शब्दों में, मायावादी निर्विशेषवादी सोचते हैं कि ईश्वर का स्वरूप भी इस भौतिक जगत् की उपज है। अल्पज्ञानी होने के कारण वे यह नहीं समझ सकते कि कृष्ण का स्वयं अपने से भिन्न कोई शरीर नहीं है। वे तथा उनका शरीर दोनों एक ही परम सत्य हैं। ऐसे लोग कृष्ण का पूर्ण ज्ञान न होने के कारण उनके चरणकमलों पर अपराध करते हैं। इसीलिए वे परम सत्य के मूल नाम "कृष्ण" का नामोच्चारण नहीं करते। वे अपने निर्विशेष ढंग से निर्विशेष ब्रह्म, आत्मा का उच्चारण करते हैं। दूसरे शब्दों में, वे परम सत्य के अप्रत्यक्ष निर्देश में उलझे रहते हैं। यदि वे कभी भूल से "गोविन्द," "कृष्ण" या "माधव" नाम का उच्चारण करते भी हैं, तो वे यह नहीं समझ पाते कि ये नाम परम पुरुष गोविन्द, कृष्ण या माधव के समान ही हैं। अन्ततोगत्वा निर्विशेषवादी होने के कारण उनके साकार नामोच्चारण में कोई शक्ति नहीं रहती। वास्तव में वे कृष्ण में विश्वास नहीं करते, अपितु इन नामों को भौतिक ध्वनियाँ मानते हैं। पवित्र

भगवन्नाम की महिमा न समझ पाने के कारण ही वे अप्रत्यक्ष नाम अर्थात् ब्रह्म, आत्मा तथा चैतन्य नामों का उच्चारण करते रहते हैं।

वास्तविकता तो यह है कि कृष्ण का नाम तथा कृष्ण पुरुष (नामी) दोनों ही आध्यात्मिक हैं। कृष्ण से सम्बन्धित हर वस्तु दिव्य, आनन्दमय तथा वस्तुपरक है। बद्धजीव के लिए शरीर आत्मा से भिन्न है और पिता द्वारा दिया गया नाम भी आत्मा से भिन्न है। भौतिक वस्तुओं के साथ अपनी पहचान बनाने के कारण ही बद्धजीव अपनी वास्तविक स्थिति प्राप्त नहीं कर पाता। वह कृष्ण का नित्य दास होकर भी भिन्न रीति से कार्य करता है। *स्वरूप* अर्थात् जीव की वास्तविक पहचान का वर्णन महाप्रभु ने इस प्रकार किया है—*जीवेर 'स्वरूप' हय— कृष्णेर 'नित्य दास'।* बद्धजीव अपने मूल स्वरूप के कार्यों को भूल चुका है। किन्तु कृष्ण के साथ ऐसा नहीं है। कृष्ण का नाम तथा स्वयं कृष्ण अभिन्न हैं। *माया* कृष्ण जैसी कोई वस्तु नहीं है, क्योंकि कृष्ण भौतिक सृष्टि की उपज नहीं हैं। कृष्ण के शरीर तथा उनके आत्मा में कोई अन्तर नहीं है। कृष्ण एकसाथ शरीर और आत्मा दोनों हैं। शरीर तथा आत्मा का अन्तर बद्धजीवों पर लागू होता है। बद्धजीव का शरीर उसकी आत्मा से भिन्न है और उसका नाम उसके शरीर से भिन्न है। किसी का नाम जॉन हो सकता है और हम जॉन कहकर पुकारें, तो हो सकता है, वह कभी भी प्रकट न हो सके। किन्तु यदि हम कृष्ण के पवित्र नाम का उच्चारण करते हैं, तो वे तुरन्त हमारी जीभ पर प्रकट होते हैं। *पद्म पुराण* में कृष्ण ने कहा है—*यत्र गायन्ति मद्भक्ता तत्र तिष्ठामि नारद*—"हे नारद, जहाँ कहीं भी मेरे भक्त मेरा कीर्तन करते रहते हैं, मैं वहाँ उपस्थित रहता हूँ।" जब भक्तगण कृष्ण के पवित्र नाम का—हरे कृष्ण, हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण, हरे हरे / हरे राम, हरे राम, राम राम, हरे हरे—कीर्तन करते हैं, तो कृष्ण तुरन्त वहाँ उपस्थित हो जाते हैं।

नाम चिन्तामणिः कृष्णश्चैतन्य-रस-विग्रहः ।
पूर्णः शुद्धो नित्य-मुक्तोऽभिन्नत्वान्नाम-नामिनोः ॥ १३३॥

नाम चिन्तामणिः कृष्णश्चैतन्य-रस-विग्रहः ।
पूर्णः शुद्धो नित्य-मुक्तोऽभिन्नत्वान्नाम-नामिनोः ॥ १३३॥

नामः—पावन नाम; **चिन्तामणिः**—सभी आध्यात्मिक वरदानों के दिव्य आनन्दमय दाता; **कृष्णः**—कृष्ण से अभिन्न; **चैतन्य-रस-विग्रहः**—सभी दिव्य रसों के स्वरूप; **पूर्णः**—पूर्ण; **शुद्धः**—शुद्ध, भौतिक कल्मष से रहित; **नित्य**—शाश्वत; **मुक्तः**—मुक्त; **अभिन्न-त्वात्**—अभिन्न होने के कारण; **नाम**—पावन नाम का; **नामिनोः**—और उस नाम के स्वामी का।

अनुवाद

"'कृष्ण का पवित्र नाम दिव्य रूप से आनन्दमय है। यह सभी प्रकार के आध्यात्मिक वर देने वाला है, क्योंकि यह समस्त आनन्द के आगार, स्वयं कृष्ण है। कृष्ण का नाम पूर्ण है और यह सभी दिव्य रसों का स्वरूप है। यह किसी भी स्थिति में भौतिक नाम नहीं है और यह स्वयं कृष्ण से किसी तरह कम शक्तिशाली नहीं है। चूँकि कृष्ण का नाम भौतिक गुणों से कलुषित नहीं होता, अतएव इसका माया में लिप्त होने का प्रश्न ही नहीं उठता। कृष्ण का नाम सदैव मुक्त तथा आध्यात्मिक है, यह कभी भी भौतिक प्रकृति के नियमों द्वारा बद्ध नहीं होता। ऐसा इसीलिए है, क्योंकि कृष्ण-नाम तथा स्वयं कृष्ण अभिन्न हैं।

तात्पर्य

यह श्लोक *पद्म पुराण* का है।

अतएव कृष्णेर 'नाम', 'देह', 'विलास' ।
प्राकृतेन्द्रिय-ग्राह्य नहे, हय स्व-प्रकाश ॥१३४॥

अतएव कृष्णेर 'नाम', 'देह', 'विलास' ।
प्राकृतेन्द्रिय-ग्राह्य नहे, हय स्व-प्रकाश ॥ १३४॥

अतएव—अतएव; **कृष्णेर**—भगवान् कृष्ण का; **नाम**—पावन नाम; **देह**—देह; **विलास**—लीलाएँ; **प्राकृत-इन्द्रिय**—भौतिक पदार्थ से बनी कुंठित इन्द्रियों से; **ग्राह्य**—अनुभवगम्य; **नहे**—नहीं; **हय**—हैं; **स्व-प्रकाश**—स्व प्रकाशित।

अनुवाद

"भगवान् कृष्ण का पवित्र नाम, उनका शरीर तथा उनकी लीलाएँ इन कुंठित भौतिक इन्द्रियों द्वारा नहीं जाने जा सकते। वे स्वतन्त्र रूप से प्रकट होते हैं।

तात्पर्य

कृष्ण का दिव्य शरीर, नाम, रूप, गुण, लीलाएँ तथा पार्षद सब मिलकर परम सत्य की रचना करते हैं और कृष्ण के ही तुल्य (*सच्चिदानन्द-विग्रह*) हैं। जब तक जीव भौतिक प्रकृति के तीन गुणों—सतो, रजो तथा तमो गुणों से बद्ध रहता है, तब तक उसकी भौतिक इन्द्रियों के विषय—भौतिक रूप, स्वाद, गन्ध, शब्द तथा स्पर्श—उसे आध्यात्मिक ज्ञान तथा आनन्द को समझने में सहायक नहीं होते। वे तो शुद्ध भक्त को अनुभव होते हैं। जीव के भौतिक नाम, रूप तथा गुण एक-दूसरे से भिन्न होते हैं। भौतिक जगत् में परम पूर्ण की कोई धारणा नहीं है; किन्तु जब हम कृष्णभावनामृत को स्वीकार करते हैं, तब हमें पता चलता है कि कृष्ण के शरीर तथा उनके नाम, कार्य तथा पार्षदों में कोई अन्तर नहीं है।

कृष्ण-नाम, कृष्ण-गुण, कृष्ण-लीला-वृन्द ।
कृष्णेर स्वरूप-सम——सब चिदानन्द ॥ १३५॥

कृष्ण-नाम, कृष्ण-गुण, कृष्ण-लीला-वृन्द ।
कृष्णेर स्वरूप-सम——सब चिदानन्द ॥ १३५॥

कृष्ण-नाम—कृष्ण का पावन नाम; **कृष्ण-गुण**—कृष्ण के दिव्य गुण; **कृष्ण-लीला-वृन्द**—भगवान् कृष्ण की दिव्य लीलाएँ; **कृष्णेर स्वरूप**—कृष्ण के स्वरूप के; **सम**—समान; **सब**—सभी; **चित्-आनन्द**—आध्यात्मिक और आनन्दमय।

अनुवाद

"कृष्ण का पवित्र नाम, उनके दिव्य गुण तथा उनकी दिव्य लीलाएँ स्वयं भगवान् कृष्ण के समान हैं। वे सभी आध्यात्मिक तथा आनन्दमय हैं।

अतः श्रीकृष्ण-नामादि न भवेद्ग्राह्यमिन्द्रियैः ।
सेवोन्मुखे हि जिह्वादौ स्वयमेव स्फुरत्यदः ॥ १३६॥

अतः श्रीकृष्ण-नामादि न भवेद्ग्राह्यमिन्द्रियैः ।
सेवोन्मुखे हि जिह्वादौ स्वयमेव स्फुरत्यदः ॥ १३६॥

अतः—इसलिए (चूँकि कृष्ण के नाम, रूप तथा गुण सभी परम भूमिका पर होते हैं); **श्री-कृष्ण-नाम-आदि**—श्रीकृष्ण नाम, रूप, गुण, लीलाएँ आदि; **न**—नहीं; **भवेत्**—हो सकतीं; **ग्राह्यम्**—अनुभव; **इन्द्रियैः**—कुंठित भौतिक इन्द्रियों से; **सेवा-उन्मुखे**—उनकी सेवा में लगे व्यक्ति को; **हि**—निस्सन्देह; **जिह्वा-आदौ**—जीभ से आरम्भ होकर; **स्वयम्**—स्वयं; **एव**—ही; **स्फुरति**—प्रकट होती हैं; **अदः**—वे (कृष्ण के नाम, स्वरूप, गुण आदि)।

अनुवाद

"'इसलिए भौतिक इन्द्रियाँ कृष्ण के नाम, रूप, गुण तथा लीलाओं को समझ नहीं पातीं। जब बद्धजीवों में कृष्णभावना जाग्रत होती है और वह अपनी जीभ से भगवान् के पवित्र नाम का कीर्तन करता है तथा भगवान् के शेष बचे भोजन का आस्वादन करता है, तब उसकी जीभ शुद्ध हो जाती है और वह क्रमशः समझने लगता है कि कृष्ण कौन हैं।'

तात्पर्य

यह श्लोक *भक्तिरसामृतसिन्धु* (१.२.२३४) में लिपिबद्ध है।

ब्रह्मानन्द हैते पूर्णानन्द लीला-रस ।
ब्रह्म-ज्ञानी आकर्षिया करे आत्म-वश ॥१३७॥

ब्रह्मानन्द हैते पूर्णानन्द लीला-रस ।
ब्रह्म-ज्ञानी आकर्षिया करे आत्म-वश ॥ १३७॥

ब्रह्म-आनन्द—आत्म-साक्षात्कार का सुख; **हैते**—से; **पूर्ण-आनन्द**—पूर्ण आनन्द; **लीला-रस**—भगवत् लीलाओं के रस; **ब्रह्म-ज्ञानी**—ब्रह्मज्ञानी; **आकर्षिया**—आकर्षित करके; **करे**—करते हैं; **आत्म-वश**—कृष्ण के अधीन।

अनुवाद

" भगवान् कृष्ण की लीलाओं के रस आनन्द से पूर्ण हैं। वे ज्ञानी को ब्रह्म-साक्षात्कार के आनन्द से आकर्षित कर उसे जीत लेते हैं।

तात्पर्य

जब कोई यह समझ लेता है कि वह इस भौतिक जगत् का नहीं, अपितु आध्यात्मिक जगत् का है, तो वह मुक्त कहलाता है। आध्यात्मिक जगत् में स्थित होना निश्चय ही आनन्दप्रद है, किन्तु जो लोग भगवान् कृष्ण के नाम, रूप, गुण तथा लीलाओं की अनुभूति करते हैं, वे आत्मा का साक्षात्कार करने

वाले की तुलना में कई गुना अधिक दिव्य आनन्द का भोग करते हैं। जब कोई आत्म-साक्षात्कार के पद पर स्थित होता है, तब वह सरलतापूर्वक निश्चित रूप से कृष्ण के प्रति आकृष्ट हो सकता है और उनका दास बन सकता है। इसकी व्याख्या *भगवद्गीता* (१८.५४) में हुई है :

ब्रह्मभूतः प्रसन्नात्मा न शोचति न काङ्क्षति।
समः सर्वेषु भूतेषु मद्भक्तिं लभते पराम्॥

"जो इस तरह दिव्य पद को प्राप्त है, उसे तुरन्त परम ब्रह्म का साक्षात्कार होता है और वह पूर्णतः प्रसन्न बन जाता है। वह न कभी शोक करता है, न किसी वस्तु की इच्छा करता है। वह सभी जीवों को समदृष्टि से देखता है। इस स्थिति में वह मेरी शुद्ध भक्ति को प्राप्त करता है।"

जब कोई आध्यात्मिक अनुभूति (*ब्रह्मभूत*) प्राप्त कर लेता है, तब वह प्रसन्न रहता है (*प्रसन्नात्मा*), क्योंकि उसे भौतिक सोच-विचारों से मुक्ति मिल जाती है। जो यह पद प्राप्त कर लेता है, वह भौतिक कर्म तथा कर्मफल से विचलित नहीं होता। वह हर एक को आत्मा के रूप में देखता है (*पण्डिताः समदर्शिनः*)। जब मनुष्य पूरी तरह से अनुभूति प्राप्त कर लेता है, तब वह शुद्ध भक्ति के पद को प्राप्त करता है (*मद्भक्तिं लभते पराम्*)। भक्ति के पद को पाते ही मनुष्य स्वतः अनुभव करने लगता है कि कृष्ण कौन हैं। जैसा भगवान् ने *भगवद्गीता* (१८.५५) में कहा है :

भक्त्या मामभिजानाति यावान् यश्चास्मि तत्त्वतः।
ततो मां तत्त्वतो ज्ञात्वा विशते तदनन्तरम्॥

"केवल भक्ति से मुझे पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के रूप में यथारूप समझा जा सकता है और जब कोई ऐसी भक्ति से परमेश्वर को पूरी तरह समझ लेता है, तब वह भगवद्धाम में प्रवेश कर सकता है।"

भक्ति-पद पर रहकर ही मनुष्य पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् कृष्ण तथा उनके दिव्य नाम, रूप, गुण, लीलाओं एवं पार्षदों को समझ सकता है। इस तरह आध्यात्मिक योग्यता प्राप्त करने पर ही जीव को भगवद्धाम में प्रवेश करने दिया जाता है और वह भगवद्धाम वापस जा सकता है (*विशते तदनन्तरम्*)।

स्व-सुख-निभृत-चेतास्तद्व्युदस्तान्य-भावो
ऽप्यजित-रूचिर-लीलाकृष्ट-सारस्तदीयम् ।
व्यतनुत कृपया यस्तत्त्व-दीपं पुराणं
तमखिल-वृजिन-घ्नं व्यास-सूनुं नतोऽस्मि ॥ १३८॥

स्व-सुख—आत्मा के सुख में; **निभृत**—एकान्त; **चेताः**—जिसकी चेतना; **तत्**—उसके कारण; **व्युदस्त**—व्यक्त करके; **अन्य-भावः**—अन्य प्रकार की चेतना; **अपि**—यद्यपि; **अजित**—श्रीकृष्ण को; **रुचिर**—प्रसन्न करने वाली, रुचिकर; **लीला**—लीलाओं से; **आकृष्ट**—आकर्षित होकर; **सारः**—जिनका हृदय; **तदीयम्**—भगवान् की लीलाओं से; **व्यतनुत**—प्रकट, प्रदर्शित; **कृपया**—कृपापूर्वक; **यः**—जो; **तत्त्व-दीपम्**—परम सत्य के उद्दीप्त प्रकाश; **पुराणम्**—पुराण (*श्रीमद्भागवतम्*); **तम्**—उनको; **अखिल-वृजिन-घ्नम्**—सभी अशुभ को नष्ट करके; **व्यास-सूनुम्**—व्यासदेव के सुपुत्र को; **नतः अस्मि**—मैं प्रणाम करता हूँ।

अनुवाद

"'मैं अपने गुरु व्यास-पुत्र शुकदेव गोस्वामी को सादर नमस्कार करता हूँ। वे ही इस ब्रह्माण्ड के अन्तर्गत सारी अशुभ वस्तुओं को परास्त करते हैं। यद्यपि वे प्रारम्भ में ब्रह्म-साक्षात्कार के सुख में निमग्न थे और अन्य समस्त प्रकार की चेतना का परित्याग करके एकान्त वास कर रहे थे, किन्तु वे श्रीकृष्ण की अत्यन्त रागमयी लीलाओं के प्रति आकृष्ट हो गये। अतएव उन्होंने कृपापूर्वक श्रीमद्भागवत नामक सर्वोच्च पुराण का प्रवचन किया, जो परम सत्य का उज्ज्वल प्रकाश है और जो भगवान् कृष्ण की लीलाओं का वर्णन करता है।'

तात्पर्य

श्रीमद्भागवत (१२.१२.६९) का यह श्लोक सूत गोस्वामी द्वारा कहा गया था।

ब्रह्मानन्द हैते पूर्णानन्द कृष्ण-गुण ।
अतएव आकर्षये आत्मारामेर मन ॥ १३९॥

ब्रह्मानन्द हैते पूर्णानन्द कृष्ण-गुण ।
अतएव आकर्षये आत्मारामेर मन ॥ १३९ ॥

ब्रह्म-आनन्द—ब्रह्म साक्षात्कार का आनन्द; **हैते**—से; **पूर्ण-आनन्द**—पूर्ण आनन्द; **कृष्ण-गुण**—भगवान् कृष्ण के गुण; **अतएव**—अतएव; **आकर्षये**—आकर्षित करते हैं; **आत्म-आरामेर मन**—स्वरूपसिद्ध व्यक्तियों के मन।

अनुवाद

"श्रीकृष्ण के दिव्य गुण पूर्णतया आनन्दमय तथा आस्वाद्य हैं। फलस्वरूप भगवान् कृष्ण के गुण आत्म-साक्षात्कार प्राप्त व्यक्तियों के मन को भी आत्म-साक्षात्कार के आनन्द से आकर्षित कर लेते हैं।

আত্মারামাশ্চ মুনয়ো নির্গ্রন্থা অপ্যুরুক্রমে ।
কুর্বন্ত্যহৈতুকীং ভক্তিমিত্থম্ভূত-গুণো হরিঃ ॥ ১৪০ ॥

आत्मारामाश्च मुनयो निर्ग्रन्था अप्युरुक्रमे ।
कुर्वन्त्यहैतुकीं भक्तिमित्थम्भूत-गुणो हरिः ॥ १४० ॥

आत्म-आरामः—जो व्यक्ति जो भगवान् की सेवा में दिव्य रूप से स्थित होने में आनन्द का अनुभव करते हैं; **च**—भी; **मुनयः**—महान साधु जिन्होंने भौतिक स्वार्थों, सकाम कर्मों इत्यादि का पूरी तरह त्याग कर दिया है; **निर्ग्रन्थाः**—जो लोग किसी भौतिक इच्छा में रुचि नहीं रखते; **अपि**—अवश्य; **उरुक्रमे**—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् कृष्ण को, जिनकी लीलाएँ अद्भुत हैं; **कुर्वन्ति**—करते हैं; **अहैतुकीम्**—अकारण या बिना भौतिक इच्छाओं के; **भक्तिम्**—भक्ति; **इत्थम्-भूत**—इतने अद्भुत कि आत्म-तुष्ट लोगों का ध्यान आकृष्ट कर लेते हैं; **गुणः**—दिव्य गुणों से पूर्ण; **हरिः**—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान्।

अनुवाद

"'जो आत्माराम अर्थात् स्वयं-सन्तुष्ट हैं और बाहरी भौतिक इच्छाओं से आकृष्ट नहीं होते, वे भी श्रीकृष्ण की प्रेमाभक्ति के प्रति आकर्षित होते हैं, जिनके गुण दिव्य हैं और कार्यकलाप अद्भुत हैं। भगवान् हरि कृष्ण कहलाते हैं, क्योंकि उनका स्वरूप अत्यन्त दिव्य और आकर्षक है।'

এই সব রহু——কৃষ্ণ-চরণ-সম্বন্ধে ।
আত্মারামের মন হরে তুলসীর গন্ধে ॥ ১৪১ ॥

एइ सब रहु—कृष्ण-चरण-सम्बन्धे ।
आत्मारामेर मन हरे तुलसीर गन्धे ॥ १४१ ॥

एइ सब रहु—भगवान् कृष्ण लीलाओं के अलावा; **कृष्ण-चरण-सम्बन्धे**—कृष्ण के चरणकमलों से सम्बन्धित; **आत्म-आरामेर**—आत्माराम व्यक्तियों के; **मन**—मन; **हरे**—आकर्षित करती है; **तुलसीर गन्धे**—तुलसीदल की सुगन्ध।

अनुवाद

"भगवान् कृष्ण की लीलाओं के अतिरिक्त, जब उनके चरणकमलों पर तुलसी-दल चढ़ाया जाता है, तब उसकी सुगन्ध से आत्म-साक्षात्कार प्राप्त व्यक्तियों (आत्माराम) के भी मन आकृष्ट हो जाते हैं।

तस्यारविन्द-नयनस्य पदारविन्द-
किञ्जल्क-मिश्र-तुलसी-मकरन्द-वायुः ।
अन्तर्गतः स्व-विवरेण चकार तेषां
सङ्क्षोभमक्षर-जुषामपि चित्त-तन्वोः ॥ १४२ ॥

तस्यारविन्द-नयनस्य पदारविन्द-
किञ्जल्क-मिश्र-तुलसी-मकरन्द-वायुः ।
अन्तर्गतः स्व-विवरेण चकार तेषां
सङ्क्षोभमक्षर-जुषामपि चित्त-तन्वोः ॥ १४२ ॥

तस्य—उनके; **अरविन्द-नयनस्य**—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के, जिनके नेत्र कमल के समान हैं; **पद-अरविन्द**—चरणकमलों का; **किञ्जल्क**—केसर से; **मिश्र**—मिश्रित; **तुलसी**—तुलसी-पत्र की; **मकरन्द**—सुगन्ध से; **वायुः**—वायु; **अन्तः-गतः**—प्रवेश किया; **स्व-विवरेण**—नासिकाओं से; **चकार**—किया; **तेषाम्**—उनका; **सङ्क्षोभम्**—महान् उत्तेजना; **अक्षर-जुषाम्**—निर्विशेष के साक्षात्कार के अनुभवी (चार कुमार); **अपि**—भी; **चित्त-तन्वोः**—मन और शरीर का।

अनुवाद

"'जब भगवान् के चरणकमलों से तुलसी तथा केशर की सुगन्ध ले जाने वाली वायु ने उन मुनियों (कुमारों) की नासिकाओं से होकर हृदय में प्रवेश किया, तो निर्विशेष ब्रह्म में आसक्त रहते हुए भी उन्होंने अपने तन तथा मन में परिवर्तन का अनुभव किया।'

तात्पर्य

यह श्लोक *श्रीमद्भागवत* (३.१५.४३) से लिया गया है। विदुर तथा मैत्रेय दिति के गर्भ के विषय में बात कर रहे थे। दिति के गर्भ से देवतागण अत्यन्त भयभीत हो उठे और वे ब्रह्माजी के पास गये। ब्रह्माजी ने उनसे चतु:सन कुमारों द्वारा जय तथा विजय के शापित होने की कथा कह सुनाई। एक बार चतु:सन कुमार पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् नारायण से भेंट करने वैकुण्ठ गये, जहाँ सातवें द्वार में प्रवेश करते समय जय तथा विजय नामक दो द्वारपालों ने उन्हें रोक दिया। ईर्ष्या-वश जय और विजय ने कुमारों को प्रविष्ट होने नहीं दिया; फलस्वरूप कुमारों ने क्रुद्ध होकर उन दोनों को शाप दे दिया कि वे इस भौतिक जगत् में असुरों के परिवार में जन्म लें। सर्वज्ञ भगवान् इस घटना को तुरन्त जान गये, अत: वे अपनी पत्नी लक्ष्मीदेवी के साथ आये। उन चतु:सन कुमारों ने तुरन्त भगवान् को नमस्कार किया। मात्र भगवान् का दर्शन करने तथा उनके पाँवों पर चढ़ी तुलसी तथा केसर की गन्ध सूँघकर ही चारों कुमार भक्त बन गये और उन्होंने अपना दीर्घकालीन निर्विशेषवाद त्याग दिया। इस प्रकार चारों कुमार मात्र तुलसी तथा केसर की गन्ध सूँघकर वैष्णव बन गये। जो लोग ब्रह्म-साक्षात्कार के स्तर पर हैं और कृष्ण के चरणकमलों पर जिन्होंने कोई अपराध नहीं किया है, वे भगवान् के चरणकमलों की गन्ध सूँघकर ही तुरन्त वैष्णव बन जाते हैं। किन्तु जो लोग अपराधी हैं या असुर हैं, वे कभी भगवान् के व्यक्तिगत लक्षणों के प्रति आकृष्ट नहीं होते, भले ही वे भगवान् के मन्दिर में कई बार क्यों न जाते हों। हमने वृन्दावन में ऐसे अनेक मायावादी संन्यासी देखे हैं, जो गोविन्दजी, गोपीनाथ या मदनमोहन के मन्दिर में आते तक नहीं, क्योंकि वे इन मन्दिरों को *माया* समझते हैं। इसीलिए वे मायावादी कहलाते हैं। इसीलिए श्रीकृष्ण चैतन्य महाप्रभु ने कहा कि ये मायावादी सबसे बड़े अपराधी हैं।

অতএব 'কৃষ্ণ-নাম' না আইসে তার মুখে ।
মায়াবাদি-গণ যাতে মহা বহির্মুখে ॥ ১৪৩॥
अतएव 'कृष्ण-नाम' ना आइसे तार मुखे ।
मायावादि-गण ग्राते महा बहिर्मुखे ॥ १४३॥

अतएव—इसलिए; **कृष्ण-नाम**—कृष्ण का पावन नाम; **ना**—नहीं; **आइसे**—आता; **तार मुखे**—उनके मुखों में; **मायावादि-गण**—सभी मायावादियों के; **ग्राते**—क्योंकि; **महा बहिः-मुखे**—नास्तिक दर्शन के कारण महान् अपराधी।

अनुवाद

"चूँकि मायावादी महान् अपराधी तथा नास्तिक हैं, इसीलिए कृष्ण का पवित्र नाम उनके मुखों से नहीं निकलता।

तात्पर्य

चूँकि मायावादी दार्शनिक यह कहकर भगवान् की निरन्तर निन्दा करते रहते हैं कि उनके सिर, हाथ या पाँव नहीं हैं, अतएव वे ब्रह्म का आंशिक साक्षात्कार करने पर भी अनेक जन्मों तक अपराधी बने रहते हैं। किन्तु यदि ऐसे निर्विशेषवादियों ने भगवान् के चरणकमलों पर अपराध नहीं किये होते, तो वे भक्त की संगति में तुरन्त भक्त बन जाते हैं। दूसरे शब्दों में, यदि निर्विशेषवादी अपराधी नहीं होता, तो वह अन्य भक्तों की संगति का अवसर पाने पर भक्त बन सकता है। यदि वह अपराधी है, तो पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् की संगति पाकर भी उसे बदला नहीं जा सकता। श्रीकृष्ण चैतन्य महाप्रभु इस मायावादी अपराधी से बहुत भयभीत थे; इसीलिए वे इस प्रकार बोले।

ভাবকালি বেচিতে আমি আইলাঙ কাশীপুরে ।
গ্রাহক নাহি, না বিকায়, লঞা যাব ঘরে ॥১৪৪॥

भावकालि वेचिते आमि आइलाङ काशीपुरे ।
ग्राहक नाहि, ना विकाय, लञा ग्राब घरे ॥१४४॥

भावकालि—भक्ति-भाव; **वेचिते**—बेचने के लिए; **आमि**—मैं; **आइलाङ**—आया हूँ; **काशीपुरे**—काशी नगर में; **ग्राहक नाहि**—कोई ग्राहक नहीं; **ना विकाय**—नहीं बिकते; **लञा ग्राब घरे**—तब मुझे अपनी वस्तु घर वापस ले जानी होगी।

अनुवाद

"मैं इस काशी नगरी में अपने प्रेम-भावों को बेचने आया हूँ, किन्तु मुझे कोई ग्राहक नहीं मिल पा रहा है। यदि वे नहीं बिक सकते तो उन्हें मैं घर वापस लेता जाऊँगा।

ভারী বোঝা লঞা আইলাঙ, কেমনে লঞা যাব? ।
অল্প-স্বল্প-মূল্য পাইলে, এথাই বেচিব ॥ ১৪৫ ॥

भारी बोझा लञा आइलाङ; केमने लञा याब? ।
अल्प-स्वल्प-मूल्य पाइले, एथाइ वेचिब ॥ १४५ ॥

भारी बोझा—भारी बोझ; **लञा**—उठाकर, लाकर; **आइलाङ**—मैं आया; **केमने**—कैसे; **लञा याब**—वापस ले जाऊँगा; **अल्प-स्वल्प-मूल्य**—वास्तविक मूल्य का एक तुच्छ भाग; **पाइले**—यदि मुझे मिले; **एथाइ**—यहाँ; **वेचिब**—मैं बेच दूँगा।

अनुवाद

"मैं इस शहर में बेचने के लिए भारी बोझ लेकर आया हूँ। इसे फिर वापस ले जाना कठिन कार्य है, अतः यदि मुझे असली मूल्य का कुछ अंश भी मिल सका, तो मैं इस काशी नगरी में इसे बेच दूँगा।"

तात्पर्य

श्री चैतन्य महाप्रभु भगवान् का दिव्य नाम बेच रहे थे। किन्तु काशी तो मायावादियों (निराकारवादियों) की नगरी थी; अतः यहाँ के लोग कभी भी हरे कृष्ण महामन्त्र का कीर्तन नहीं करेंगे। इसीलिए श्री चैतन्य महाप्रभु निराश थे। वे इन मायावादियों को हरे कृष्ण महामन्त्र के कीर्तन की महिमा कैसे सिखलाते? भगवान् के पवित्र नाम के कीर्तन के प्रति आकर्षण शुद्ध भक्तों की सम्पत्ति है और काशी में ऐसे शुद्ध भक्त मिलने की कोई सम्भावना नहीं थी। फलस्वरूप श्री चैतन्य महाप्रभु की गठरी निश्चित रूप से भारी थी। इसीलिए महाप्रभु ने सुझाव रखा कि यदि काशी में शुद्ध भक्त नहीं हैं, तो भी यदि किसी की हरे कृष्ण मन्त्र का कीर्तन करने की थोड़ी सी भी रुचि हो, तो वे उचित मूल्य न पाने पर भी यह भारी बोझ उसे दे देंगे।

वास्तव में जब हम पश्चिम में हरे कृष्ण आन्दोलन का प्रचार करने आये, तब हमें इसका अनुभव हुआ था। जब १९६५ में हम न्यूयार्क आये, तो हमें कभी आशा नहीं थी कि हरे कृष्ण महामन्त्र को इस देश में स्वीकार किया जायेगा। फिर भी हमने लोगों को अपने स्टोरफ्रन्ट में आने और हरे कृष्ण महामन्त्र के कीर्तन में सम्मिलित होने के लिए आमन्त्रित किया। भगवान् का नाम इतना आकर्षक है कि न्यूयार्क में हमारे स्टोरफ्रन्ट में आने मात्र से

भाग्यशाली युवा कृष्णभावनाभावित हो गये। यद्यपि यह मिशन नगण्य पूँजी से चालू हुआ था, किन्तु अब यह सुचारु रूप से चल रहा है। पश्चिम में हरे कृष्ण महामन्त्र का प्रसार इसलिए हो सका, क्योंकि ये युवा लोग अपराधी नहीं थे। ये लोग अधिक शुद्ध नहीं थे, न ही वैदिक ज्ञान में उन्नत थे, किन्तु वे अपराधी नहीं थे, इसलिए उन्होंने हरे कृष्ण आन्दोलन के महत्त्व को स्वीकार किया। अब हम यह देखकर अत्यन्त प्रसन्न हैं कि यह आन्दोलन पश्चिमी देशों में दिन दूनी रात चौगुणी प्रगति कर रहा है। इससे हम यही निष्कर्ष निकालते हैं कि पश्चिमी देशों के तथाकथित म्लेच्छ तथा यवन, अपराधी मायावादियों या नास्तिक निर्विशेषवादियों की अपेक्षा अधिक शुद्ध हैं।

এত বলি' সেই বিপ্রে আত্মসাথ করি' ।
প্রাতে উঠি মথুরা চলিলা গৌরহরি ॥ ১৪৬॥

এত বলি' সেই বিপ্রে আত্মসাথ করি' ।
প্রাতে উঠি মথুরা চলিলা গৌরহরি ॥ ১৪৬॥

এত বলি'—यह कहकर; **सेइ विप्रे**—इस ब्राह्मण को; **आत्मसाथ करि'**—अपने भक्त के रूप में स्वीकार करके; **प्राते उठि**—प्रातः काल उठकर; **मथुरा चलिला**—मथुरा के लिए चल पड़े; **गौरहरि**—श्री चैतन्य महाप्रभु।

अनुवाद

यह कहकर श्री चैतन्य महाप्रभु ने उस ब्राह्मण को अपने भक्त के रूप में स्वीकार कर लिया। अगले दिन वे जल्दी उठकर मथुरा के लिए चल पड़े।

সেই তিন সঙ্গে চলে, প্রভু নিষেধিল ।
দূর হৈতে তিন-জনে ঘরে পাঠাইল ॥১৪৭॥

সেই তিন সঙ্গে চলে, প্রভু নিষেধিল ।
দূর হৈতে তিন-জনে ঘরে পাঠাইল ॥ ১৪৭॥

सेइ तिन—वे तीन; **सङ्गे**—श्री चैतन्य महाप्रभु के साथ; **चले**—चलने लगे; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **निषेधिल**—मना किया; **दूर हैते**—दूर से; **तिन-जने**—उन तीन व्यक्तियों को; **घरे**—घर; **पाठाइल**—वापस भेज दिया।

अनुवाद

जब श्री चैतन्य महाप्रभु मथुरा के लिए चल पड़े, तो तीनों भक्त उनके साथ चलने लगे। किन्तु महाप्रभु ने दूर से ही उन्हें साथ चलने से मना किया और उन्हें घर लौट जाने के लिए आदेश दिया।

प्रभुर विरहे तिने एकत्र मिलिया ।
प्रभु-गुण गान करे प्रेमे मत्त हञा ॥ १४८॥
प्रभुर विरहे तिने एकत्र मिलिया ।
प्रभु-गुण गान करे प्रेमे मत्त हञा ॥ १४८॥

प्रभुर विरहे—महाप्रभु से विरह के कारण; **तिने**—वे तीनों; **एकत्र**—इकट्ठे; **मिलिया**—मिलकर; **प्रभु-गुण**—महाप्रभु के दिव्य गुणों का; **गान करे**—महिमागान करने लगे; **प्रेमे**—प्रेम में; **मत्त हञा**—उन्मत्त होकर।

अनुवाद

महाप्रभु के विरह में तीनों जन एकत्र होकर उनके पवित्र गुणों का महिमागान करते और इस तरह प्रेमभाव में निमग्न रहते।

'प्रयागे' आसिया प्रभु कैल वेणी-स्नान ।
'माधव' देखिया प्रेमे कैल नृत्य-गान ॥ १४९॥
'प्रयागे' आसिया प्रभु कैल वेणी-स्नान ।
'माधव' देखिया प्रेमे कैल नृत्य-गान ॥ १४९॥

प्रयागे—प्रयाग में; **आसिया**—आकर; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **कैल**—किया; **वेणी-स्नान**—गंगा तथा यमुना के संगम पर स्नान; **माधव**—वहाँ के अधिष्ठाता विग्रह, वेणी माधव; **देखिया**—दर्शन करके; **प्रेमे**—प्रेमावेश में; **कैल**—किया; **नृत्य-गान**—नृत्य और कीर्तन।

अनुवाद

इसके बाद श्री चैतन्य महाप्रभु प्रयाग गये जहाँ उन्होंने गंगा और यमुना नदी के संगम में स्नान किया। फिर वे वेणी माधव के मन्दिर गये और वहाँ प्रेमावेश में उन्होंने कीर्तन और नृत्य किया।

तात्पर्य

प्रयाग शहर इलाहाबाद शहर से कुछ मील दूरी पर स्थित है। यहाँ पर अनेक यज्ञ सफलतापूर्वक सम्पन्न होने के कारण इसका नाम प्रयाग पड़ा। कहा गया है—*प्रकृष्टः यागः यागफलं यस्मात्।* यदि कोई प्रयाग में यज्ञ करता है, तो उसे तुरन्त बिना किसी मुश्किल के फल मिलता है। प्रयाग तीर्थराज भी कहलाता है। यह पवित्र स्थल गंगा तथा यमुना नदियों के संगम पर स्थित है। यहाँ हर वर्ष माघ-मेला नामक उत्सव लगता है और हर बारहवें वर्ष कुम्भ-मेला भी लगता है। प्रतिवर्ष यहाँ अनेक लोग स्नान करने आते हैं। माघ-मेला में सामान्यतया स्थानीय जिले के लोग आते हैं, जबकि कुम्भ-मेले में सारे भारत से लोग वहाँ रहने आते हैं और गंगा तथा यमुना में स्नान करते हैं। जो भी वहाँ जाता है, उसे इस स्थान के आध्यात्मिक प्रभाव का तुरन्त अनुभव होता है। यहाँ पर एक किला भी है, जिसे ५०० वर्ष पूर्व सम्राट अकबर ने बनवाया था और इसी किले के पास त्रिवेणी है। प्रयाग के उस पार प्रतिष्ठानपुर नामक स्थान है, जिसे झूँसी भी कहा जाता है। यहाँ अनेक साधु-महात्मा रहते हैं, इसलिए आध्यात्मिक दृष्टि से यह अत्यन्त आकर्षक है।

যমুনা দেখিয়া প্রেমে পড়ে ঝাঁপ দিয়া ।
আস্তে-ব্যস্তে ভট্টাচার্য উঠায় ধরিয়া ॥ ১৫০॥

য়মুনা দেখিয়া প্রেমে পড়ে ঝাঁপ দিয়া ।
আস্তে-ব্যস্তে ভট্টাচার্য্য উঠায় ধরিয়া ॥ ১৫০॥

য়মুনা—यमुना नदी; **देखिया**—देखकर; **प्रेमे**—प्रेमावेश में; **पड़े**—गिर गये; **झाँप दिया**—कूदकर; **आस्ते-व्यस्ते**—अत्यन्त तेजी से; **भट्टाचार्य्य**—बलभद्र भट्टाचार्य ने; **उठाय**—उठाया; **धरिया**—पकड़कर।

अनुवाद

ज्योंही श्री चैतन्य महाप्रभु ने यमुना नदी देखी, वे उसमें कूद पड़े। बलभद्र भट्टाचार्य ने शीघ्र ही उन्हें पकड़ लिया और सावधानी से ऊपर खींच लिया।

এই-মত তিন-দিন প্রয়াগে রহিলা ।
কৃষ্ণ-নাম-প্রেম দিয়া লোক নিস্তারিলা ॥ ১৫১ ॥

এइ-মত তিন-দিন প্রয়াগে রহিলা ।
কৃষ্ণ-নাম-প্রেম দিয়া লোক নিস্তারিলা ॥ ১৫১ ॥

এइ-মত—इस प्रकार; **तिन-दिन**—तीन दिन तक; **प्रयागे**—प्रयाग में; **रहिला**—रहे; **कृष्ण-नाम**—भगवान् कृष्ण का पावन नाम; **प्रेम**—और प्रेम; **दिया**—देकर; **लोक निस्तारिला**—लोगों का उद्धार किया।

अनुवाद

महाप्रभु प्रयाग में तीन दिन रहे। उन्होंने कृष्ण का पवित्र नाम तथा प्रेम प्रदान किया। इस तरह उन्होंने अनेक लोगों का उद्धार किया।

'মথুরা' চলিতে পথে যথা রহি' যায় ।
কৃষ্ণ-নাম-প্রেম দিয়া লোকেরে নাচায় ॥ ১৫২ ॥

'মথুরা' চলিতে পথে যথা রহি' যায় ।
কৃষ্ণ-নাম-প্রেম দিয়া লোকেরে নাচায় ॥ ১৫২ ॥

मथुरा—मथुरा; **चलिते**—जाते समय; **पथे**—रास्ते में; **यथा**—जहाँ भी; **रहि'**—रुकते; **याय**—गये; **कृष्ण-नाम-प्रेम**—कृष्ण का पवित्र नाम और प्रेम; **दिया**—दिया; **लोकेरे नाचाय**—लोगों को नृत्य करवाया।

अनुवाद

मथुरा जाते हुए जहाँ भी महाप्रभु रुकते, वे कृष्ण-नाम तथा कृष्ण-प्रेम प्रदान करते। इस तरह वे लोगों को नचाते।

পূর্বে যেন 'দক্ষিণ' যাইতে লোক নিস্তারিলা ।
'পশ্চিম'-দেশে তৈছে সব 'বৈষ্ণব' করিলা ॥ ১৫৩ ॥

পূর্বে যেন 'দক্ষিণ' যাইতে লোক নিস্তারিলা ।
'পশ্চিম'-দেশে তৈছে সব 'বৈষ্ণব' করিলা ॥ ১৫৩ ॥

पूर्वे—पहले; **येन**—जब; **दक्षिण**—दक्षिण भारत; **याइते**—जाते समय; **लोक**—लोगों का; **निस्तारिला**—उन्होंने उद्धार किया; **पश्चिम-देशे**—पश्चिम देशों में; **तैछे**—उसी प्रकार; **सब**—सबको; **वैष्णव**—भक्त; **करिला**—बनाया।

अनुवाद

जब उन्होंने दक्षिण भारत का भ्रमण किया था, तब उन्होंने अनेक लोगों का उद्धार किया था और जब वे पश्चिमी प्रदेश में गये, तब उन्होंने उसी तरह से अनेक लोगों को वैष्णव बनाया।

तात्पर्य

पहले जब श्री चैतन्य महाप्रभु ने दक्षिण तथा पश्चिम भारत का भ्रमण किया था, तब अनेक लोगों को वैष्णव बना लिया था। इसी तरह अब पश्चिमी जगत् में जहाँ कहीं भी भक्तगण कीर्तन कर रहे हैं, वहाँ हरे कृष्ण आन्दोलन लोगों का उद्धार कर रहा है। यह सब महाप्रभु की कृपा से हो रहा है। श्री महाप्रभु ने भविष्यवाणी की थी कि वे विश्व के हर नगर और हर गाँव के लोगों को हरे कृष्ण महामन्त्र का कीर्तन करने का अवसर प्रदान करके उनका उद्धार करेंगे।

पथे याँहा याँहा हय यमुना-दर्शन ।
ताँहा झाँप दिया पड़े प्रेमे अचेतन ॥ १५४ ॥

पथे ग्याहाँ ग्याहाँ हय ग्यमुना-दर्शन ।
ताहाँ झाँप दिया पड़े प्रेमे अचेतन ॥ १५४ ॥

पथे—रास्ते में; **ग्याहाँ ग्याहाँ**—जहाँ जहाँ; **हय**—है; **ग्यमुना-दर्शन**—यमुना का दर्शन; **ताहाँ**—वहाँ वहाँ; **झाँप दिया पड़े**—कूदकर गिर जाते थे; **प्रेमे अचेतन**—बेहोश होकर।

अनुवाद

मथुरा जाते हुए महाप्रभु को कई बार यमुना नदी मिली और वे यमुना नदी को देखते ही उसमें तुरन्त कूद पड़ते तथा जल के भीतर कृष्ण-प्रेम में अचेत हो जाते।

मथुरा-निकटे आइला—मथुरा देखिया ।
दण्डवत् हञा पड़े प्रेमाविष्ट हञा ॥ १५५ ॥

मथुरा-निकटे आइला—मथुरा देखिया ।
दण्डवत् हञा पड़े प्रेमाविष्ट हञा ॥ १५५ ॥

मथुरा-निकटे—मथुरा के निकट; **आइला**—आये; **मथुरा देखिया**—मथुरा नगर को

देखकर; **दण्डवत् हञा**—दण्डवत् प्रणाम किया; **पड़े**—गिर गये; **प्रेम-आविष्ट हञा**—प्रेमावेश में आकर।

अनुवाद

जब मथुरा के निकट पहुँचकर उन्होंने शहर देखा, तो उन्होंने भूमि पर गिरकर अत्यन्त प्रेमाविष्ट होकर दण्डवत् प्रणाम किया।

मथुरा आसिया कैला 'विश्रान्ति-तीर्थे' स्नान ।
'जन्म-स्थाने' 'केशव' देखि' करिला प्रणाम ॥ १५६॥

मथुरा आसिया कैला 'विश्रान्ति-तीर्थे' स्नान ।
'जन्म-स्थाने' 'केशव' देखि' करिला प्रणाम ॥ १५६॥

मथुरा आसिया—मथुरा के अन्दर आकर; **कैला**—किया; **विश्रान्ति-तीर्थे**—विश्राम घाट पर; **स्नान**—स्नान; **जन्म-स्थाने**—भगवान् कृष्ण के जन्म स्थान पर; **केशव**—केशव नाम का अर्चाविग्रह; **देखि'**—देखकर; **करिला प्रणाम**—सादर प्रणाम किया।

अनुवाद

मथुरा नगरी में प्रवेश करने पर श्री चैतन्य महाप्रभु ने विश्राम घाट में स्नान किया। फिर वे कृष्ण की जन्मभूमि का दर्शन करने गये और उन्होंने केशवजी का दर्शन किया। महाप्रभु ने उन्हें सादर नमस्कार किया।

तात्पर्य

अब केशवजी का मन्दिर काफी अच्छा बन चुका है। किसी समय केशवजी के मन्दिर पर सम्राट औरंगजेब ने आक्रमण किया था और वहाँ पर इतनी बड़ी मस्जिद बनवा दी थी कि उसके सामने केशवजी का मन्दिर तुच्छ लगता था। किन्तु अनेक धनी मारवाड़ियों की सहायता से मन्दिर का सुधार हुआ है और एक विशाल मन्दिर बन रहा है, जिसके सामने अब मस्जिद तुच्छ प्रतीत हो रही है। वहाँ पर कई पुरातात्विक खोजें की गई हैं और विदेश के अनेक लोग कृष्ण की जन्मभूमि की महिमा जानने लगे हैं। यह कृष्णभावनामृत आन्दोलन अनेक विदेशियों को केशवजी के मन्दिर के प्रति आकृष्ट करा रहा है और अब वे वृन्दावन के कृष्ण-बलराम मन्दिर के द्वारा भी अधिकाधिक आकृष्ट हो सकेंगे।

প্রেমানন্দে নাচে, গায়, সঘন হুঙ্কার ।
প্রভুর প্রেমাবেশ দেখি' লোকে চমত্কার ॥ ১৫৭॥

प्रेमानन्दे नाचे, गाय, सघन हुङ्कार ।
प्रभुर प्रेमावेश देखि' लोके चमत्कार ॥ १५७॥

प्रेम-आनन्दे—प्रेमानन्द में विभोर होकर; **नाचे**—नृत्य किया; **गाय**—कीर्तन किया; **सघन**—बारम्बार; **हुङ्कार**—ऊँची ध्वनि में; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु का; **प्रेम-आवेश**—प्रेमावेश; **देखि'**—देखकर; **लोके**—सभी लोग; **चमत्कार**—चकित रह गये।

अनुवाद

जब श्री चैतन्य महाप्रभु नाचने, गाने तथा जोर-जोर से हुंकार भरने लगे, तो सारे लोग उनके प्रेमावेश को देखकर चकित रह गये।

এক-বিপ্র পড়ে প্রভুর চরণ ধরিয়া ।
প্রভু-সঙ্গে নৃত্য করে প্রেমাবিষ্ট হঞা ॥ ১৫৮॥

एक-विप्र पड़े प्रभुर चरण धरिया ।
प्रभु-सङ्गे नृत्य करे प्रेमाविष्ट हञा ॥ १५८॥

एक-विप्र—एक ब्राह्मण; **पड़े**—गिर पड़ा; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **चरण धरिया**—चरणकमल पकड़कर; **प्रभु-सङ्गे**—श्री चैतन्य महाप्रभु के संग; **नृत्य करे**—वह नृत्य करने लगा; **प्रेम-आविष्ट हञा**—प्रेमावेश में आकर।

अनुवाद

एक ब्राह्मण आकर महाप्रभु के चरणकमलों पर गिर पड़ा और फिर प्रेमाविष्ट होकर उनके साथ साथ नृत्य करने लगा।

দুঁহে প্রেমে নৃত্য করি' করে কোলাকুলি ।
হরি কৃষ্ণ কহ দুঁহে বলে বাহু তুলি' ॥ ১৫৯॥

दुँहे प्रेमे नृत्य करि' करे कोलाकुलि ।
हरि कृष्ण कह दुँहे बले बाहु तुलि' ॥ १५९॥

दुँहे—दोनों ने; **प्रेमे**—प्रेमावेश में; **नृत्य करि'**—नृत्य करके; **करे**—किया; **कोलाकुलि**—आलिंगन; **हरि**—हरि के पावन नाम का; **कृष्ण**—कृष्ण के पावन नाम का; **कह**—कीर्तन करते रहे; **दुँहे**—वे दोनों; **बले**—बोलते रहे; **बाहु तुलि'**—भुजाएँ उठाकर।

अनुवाद

वे दोनों भावाविष्ट होकर नाचने तथा एक-दूसरे को आलिंगन करने लगे। वे हाथ उठाकर कहने लगे, "हरि तथा कृष्ण के नामों का कीर्तन करो!"

লোক 'হরি' 'হরি' বলে, কোলাহল হৈল ।
'কেশব'-সেবক প্রভুকে মালা পরাইল ॥১৬০॥

लोक 'हरि' 'हरि' बले, कोलाहल हैल ।
'केशव'-सेवक प्रभुके माला पराइल ॥ १६० ॥

लोक—सारे लोग; **हरि हरि बले**—हरि, हरि के पावन नाम का कीर्तन करने लगे; **कोलाहल हैल**—वहाँ बहुत शोर मच गया; **केशव-सेवक**—भगवान् केशव की सेवा में लगे पुजारी ने; **प्रभुके**—श्री चैतन्य महाप्रभु को; **माला पराइल**—माला भेंट की।

अनुवाद

तब सारे लोग "हरि! हरि!" उच्चारण करने लगे और वहाँ बहुत कोलाहल होने लगा। भगवान् केशव की सेवा में लगे पुजारी ने महाप्रभु को लाकर एक माला भेंट की।

লোকে কহে প্রভু দেখি' হঞা বিস্ময় ।
ঐছে হেন প্রেম 'লৌকিক' কভু নয় ॥১৬১॥

लोके कहे प्रभु देखि' हञा विस्मय ।
ऐछे हेन प्रेम 'लौकिक' कभु नय ॥ १६१ ॥

लोके कहे—लोगों ने कहा; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **देखि'**—देखकर; **हञा विस्मय**—विस्मित हो गये; **ऐछे**—ऐसा; **हेन**—उस जैसा; **प्रेम**—भगवत् प्रेम; **लौकिक**—लौकिक, सामान्य; **कभु नय**—कभी नहीं है।

अनुवाद

जब लोगों ने श्री चैतन्य महाप्रभु को नृत्य करते तथा कीर्तन करते देखा, तो वे आश्चर्यचकित रह गये और सबने कहा, "ऐसा दिव्य प्रेम होना कोई सामान्य बात नहीं है।"

যাঁহার দর্শনে লোকে প্রেমে মত্ত হঞা ।
হাসে, কান্দে, নাচে, গায়, কৃষ্ণ-নাম লঞা ॥ ১৬২ ॥

য়াঁহার দর্শনে লোকে প্রেমে মত্ত হঞা ।
হাসে, কান্দে, নাচে, গায়, কৃষ্ণ-নাম লঞা ॥ ১৬২ ॥

য়াঁহার দর্শনে—जिन्हें देखकर; **लोके**—लोग; **प्रेमे**—प्रेमवश; **मत्त हञा**—उन्मत्त होकर; **हासे**—हँसने लगे; **कान्दे**—रोने लगे; **नाचे**—नाचने लगे; **गाय**—गाने लगे; **कृष्ण-नाम लञा**—कृष्ण नाम ले लेकर।

अनुवाद

लोगों ने कहा, "श्री चैतन्य महाप्रभु के दर्शन मात्र से हर व्यक्ति कृष्ण-प्रेम में मतवाला हो रहा है। हर कोई हँस रहा है, रो रहा है, नाच रहा है, कीर्तन कर रहा है और कृष्ण का पवित्र नाम ले रहा है।

সর্বথা-নিশ্চিত—ইঁহো কৃষ্ণ-অবতার ।
মথুরা আইলা লোকের করিতে নিস্তার ॥ ১৬৩ ॥

সর্বথা-নিশ্চিত—ইঁহো কৃষ্ণ-অবতার ।
মথুরা আইলা লোকের করিতে নিস্তার ॥ ১৬৩ ॥

सर्वथा—बिल्कुल; **निश्चित**—निश्चित; **इँहो**—वे; **कृष्ण-अवतार**—भगवान् कृष्ण के अवतार; **मथुरा आइला**—मथुरा आये हैं; **लोकेर**—लोगों का; **करिते**—करने; **निस्तार**—उद्धार।

अनुवाद

"निश्चय ही श्री चैतन्य महाप्रभु सभी तरह से भगवान् कृष्ण के अवतार हैं। अब वे हर एक का उद्धार करने मथुरा आये हैं।"

তবে মহাপ্রভু সেই ব্রাহ্মণে লঞা ।
তাঁহারে পুছিলা কিছু নিভৃতে বসিয়া ॥ ১৬৪ ॥

তবে মহাপ্রভু সেই ব্রাহ্মণে লঞা ।
তাঁহারে পুছিলা কিছু নিভৃতে বসিয়া ॥ ১৬৪ ॥

तबे—इसके बाद; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **सेइ**—उस; **ब्राह्मणे**—ब्राह्मण को;

लञा—लेकर; **ताँहारे**—उसके पास; **पुछिला**—पूछा; **किछु**—कुछ; **निभृते वसिया**—एकान्त स्थान में बैठकर।

अनुवाद

इसके बाद श्री चैतन्य महाप्रभु उस ब्राह्मण को एक ओर ले गये। फिर एकान्त स्थान में बैठकर उससे पूछने लगे।

'आर्य, सरल, तुमि——वृद्ध ब्राह्मण ।
काहाँ हैते पाइले तुमि एइ प्रेम-धन?' ॥ १६५॥

'आर्य्य, सरल, तुमि——वृद्ध ब्राह्मण ।
काहाँ हैते पाइले तुमि एइ प्रेम-धन?' ॥ १६५॥

आर्य्य—भक्ति सेवा में उन्नत; **सरल**—सरल; **तुमि**—तुम; **वृद्ध ब्राह्मण**—वृद्ध ब्राह्मण; **काहाँ हैते**—कहाँ से; **पाइले तुमि**—तुमने पाया; **एइ**—यह; **प्रेम-धन**—प्रेम का दिव्य धन।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा, "आप वृद्ध ब्राह्मण हैं, निष्ठावान हैं तथा आध्यात्मिक जीवन में उन्नत हैं। आपको भावमय कृष्ण-प्रेम का यह दिव्य वैभव कहाँ से मिला?"

विप्र कहे,——'श्रीपाद श्री-माधवेन्द्र-पूरी ।
भ्रमिते भ्रमिते आइला मथुरा-नगरी ॥ १६६॥

विप्र कहे,——'श्रीपाद श्री-माधवेन्द्र-पुरी ।
भ्रमिते भ्रमिते आइला मथुरा-नगरी ॥ १६६॥

विप्र कहे—ब्राह्मण ने कहा; **श्रीपाद**—श्रीपाद; **श्री-माधवेन्द्र-पुरी**—श्री माधवेन्द्र पुरी; **भ्रमिते भ्रमिते**—यात्रा करते समय; **आइला**—आये; **मथुरा-नगरी**—मथुरा नगर में।

अनुवाद

उस ब्राह्मण ने कहा, "श्रीपाद माधवेन्द्र पुरी अपने भ्रमण के समय मथुरा नगरी में आये थे।

कृपा करि' तेँहो मोर निलयें आइला ।
मोरे शिष्य करि' मोर हाते 'भिक्षा' कैला ॥ १६७॥

कृपा करि' तेंहो मोर निलये आइला ।
मोरे शिष्य करि' मोर हाते 'भिक्षा' कैला ॥ १६७॥

कृपा करि'—उनकी अहैतुकी कृपा से; **तेंहो**—वे; **मोर निलये**—मेरे घर पर; **आइला**—आये; **मोरे**—मुझे; **शिष्य करि'**—शिष्य बनाकर; **मोर हाते**—मेरे हाथ से; **भिक्षा कैला**—भोजन किया।

अनुवाद

"मथुरा में रहते हुए श्रीपाद माधवेन्द्र पुरी मेरे घर पधारे थे और उन्होंने मुझे शिष्य बनाया था। उन्होंने मेरे घर में भोजन भी किया था।

গোপাল প্রকট করি' সেবা কৈল 'মহাশয়' ।
অদ্যাপিহ তাঁহার সেবা 'গোবর্ধনে' হয় ॥ ১৬৮॥
गोपाल प्रकट करि' सेवा कैल 'महाशय' ।
अद्यापिह ताँहार सेवा 'गोवर्धने' हय ॥ १६८॥

गोपाल—गोपाल का अर्चाविग्रह; **प्रकट करि'**—स्थापित करके; **सेवा**—सेवा; **कैल**—की; **महाशय**—उन महान् भक्त ने; **अद्यापिह**—अब तक; **ताँहार**—गोपाल विग्रह; **सेवा**—सेवा; **गोवर्धने**—गोवर्धन पर्वत पर; **हय**—की जाती है।

अनुवाद

"गोपाल अर्चाविग्रह की स्थापना करने के बाद श्रील माधवेन्द्र पुरी ने उनकी सेवा की। आज भी गोवर्धन पर्वत पर उसी अर्चाविग्रह की पूजा की जाती है।"

শুনি' প্রভু কৈল তাঁর চরণ বন্দন ।
ভয় পাঞা প্রভু-পায় পড়িলা ব্রাহ্মণ ॥ ১৬৯॥
शुनि' प्रभु कैल ताँर चरण वन्दन ।
भय पाञा प्रभु-पाय पड़िला ब्राह्मण ॥ १६९॥

शुनि'—यह सुनकर; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **कैल**—किया; **ताँर**—उसका; **चरण वन्दन**—चरण वन्दन; **भय पाञा**—भयभीत होकर; **प्रभु-पाय**—श्री चैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों पर; **पड़िला**—गिर पड़ा; **ब्राह्मण**—ब्राह्मण।

अनुवाद

ज्योंही महाप्रभु ने उस ब्राह्मण के साथ माधवेन्द्र पुरी के सम्बन्ध के बारे में सुना, त्योंही उन्होंने उस ब्राह्मण के चरणकमलों पर अपना नमस्कार निवेदित किया। वह ब्राह्मण भी डरकर तुरन्त ही महाप्रभु के चरणों पर गिर पड़ा।

प्रभु कहे,—"तुमि 'गुरु', आमि 'शिष्य'-प्राय ।
'गुरु' हञा 'शिष्ये' नमस्कार ना युयाय ॥ १७० ॥

प्रभु कहे,—"तुमि 'गुरु', आमि 'शिष्य'-प्राय ।
'गुरु' हञा 'शिष्ये' नमस्कार ना युयाय ॥ १७० ॥

प्रभु कहे—श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा; **तुमि**—आप; **गुरु**—मेरे आध्यात्मिक गुरु; **आमि**—मैं; **शिष्य-प्राय**—आपके शिष्य के समान; **गुरु हञा**—आध्यात्मिक गुरु होने के कारण; **शिष्ये**—शिष्य को; **नमस्कार**—नमस्कार; **ना युयाय**—उचित नहीं है।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा, "आप मेरे गुरु-पद पर आसीन हैं और मैं आपका शिष्य हूँ। चूँकि आप मेरे गुरु हैं, अतः यह उचित नहीं होगा कि आप मुझे नमस्कार करें।"

शुनिया विस्मित विप्र कहे भय पाञा ।
ऐछे बात्कह केने सन्न्यासी हञा ॥ १७१ ॥

शुनिया विस्मित विप्र कहे भय पाञा ।
ऐछे बात् कह केने सन्न्यासी हञा ॥ १७१ ॥

शुनिया—यह सुनकर; **विस्मित**—विस्मित हो गया; **विप्र**—वह ब्राह्मण; **कहे**—कहने लगा; **भय पाञा**—भयभीत होकर; **ऐछे बात्**—ऐसी बात; **कह**—आप कहते हैं; **केने**—क्यों; **सन्न्यासी हञा**—यद्यपि आप संन्यासी हो।

अनुवाद

यह सुनकर ब्राह्मण डर गया। तब उसने कहा, "आप ऐसा क्यों कह रहे हैं? आप तो संन्यासी हैं।

किन्तु तोमार प्रेम देखि' मने अनुमानि ।
माधवेन्द्र-पुरीर 'सम्बन्ध' धर——जानि ॥ १७२ ॥

किन्तु तोमार प्रेम देखि' मने अनुमानि ।
माधवेन्द्र-पुरीर 'सम्बन्ध' धर——जानि ॥ १७२ ॥

किन्तु—फिर भी; **तोमार प्रेम**—आपका उत्कट प्रेम; **देखि'**—देखकर; **मने**—मेरे मन में; **अनुमानि**—मैं अनुमान लगाता हूँ; **माधवेन्द्र-पुरीर**—श्री माधवेन्द्र पुरी के साथ; **सम्बन्ध**—सम्बन्ध; **धर**—आपका है; **जानि**—मैं समझ सकता हूँ।

अनुवाद

"आपके उत्कट प्रेम को देखकर मैं अनुमान लगा सकता हूँ कि आपका माधवेन्द्र पुरी के साथ कुछ न कुछ सम्बन्ध होना चाहिए। ऐसा मैं समझता हूँ।

कृष्ण-प्रेमा ताँहा, याँहा ताँहार 'सम्बन्ध' ।
ताहाँ विना एइ प्रेमार काहाँ नाहि गन्ध ॥ १७३ ॥

कृष्ण-प्रेमा ताँहा, य्राँहा ताँहार 'सम्बन्ध' ।
ताहाँ विना एइ प्रेमार काहाँ नाहि गन्ध ॥ १७३ ॥

कृष्ण-प्रेमा—कृष्ण-प्रेम; **ताँहा**—वहाँ; **य्राँहा**—जहाँ; **ताँहार**—उसका; **सम्बन्ध**—सम्बन्ध; **ताहाँ विना**—उनके बिना; **एइ प्रेमार**—इस प्रेम की; **काहाँ नाहि गन्ध**—गन्ध की भी सम्भावना नहीं है।

अनुवाद

"इस तरह का उत्कट प्रेम तभी अनुभव किया जा सकता है, जब किसी का माधवेन्द्र पुरी से सम्बन्ध हो। उनके बिना, ऐसे दिव्य उत्कट प्रेम की सुगन्ध भी सम्भव नहीं है।"

तबे भट्टाचार्य तारे 'सम्बन्ध' कहिल ।
शुनि' आनन्दित विप्र नाचिते लागिल ॥ १७४ ॥

तबे भट्टाचार्य्र तारे 'सम्बन्ध' कहिल ।
शुनि' आनन्दित विप्र नाचिते लागिल ॥ १७४ ॥

तबे—तत्पश्चात्; **भट्टाचार्य्य**—बलभद्र भट्टाचार्य; **तारे**—ब्राह्मण को; **सम्बन्ध कहिल**—सम्बन्ध समझाया; **शुनि'**—सुनकर; **आनन्दित**—प्रसन्न होकर; **विप्र**—ब्राह्मण; **नाचिते लागिल**—नाचने लगा।

अनुवाद

तब बलभद्र भट्टाचार्य ने माधवेन्द्र पुरी तथा श्री चैतन्य महाप्रभु का सम्बन्ध कह सुनाया। यह सुनकर ब्राह्मण अत्यन्त प्रसन्न हुआ और नाचने लगा।

তবে বিপ্র প্রভুরে লঞা আইলা নিজ-ঘরে ।
আপন-ইচ্ছায় প্রভুর নানা সেবা করে ॥১৭৫॥

तबे विप्र प्रभुरे लञा आइला निज-घरे ।
आपन-इच्छाय प्रभुर नाना सेवा करे ॥ १७५ ॥

तबे—तत्पश्चात्; **विप्र**—ब्राह्मण; **प्रभुरे**—श्री चैतन्य महाप्रभु को; **लञा**—लेकर; **आइला**—लौट आया; **निज-घरे**—अपने घर पर; **आपन-इच्छाय**—अपनी ही इच्छा से; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु की; **नाना**—नाना प्रकार की; **सेवा**—सेवाएँ; **करे**—की।

अनुवाद

तब वह ब्राह्मण श्री चैतन्य महाप्रभु को अपने घर ले गया और अपनी इच्छा से महाप्रभु की अनेक प्रकार से सेवा करने लगा।

ভিক্ষা লাগি' ভট্টাচার্যে করাইলা রন্ধন ।
তবে মহাপ্রভু হাসি' বলিলা বচন ॥১৭৬॥

भिक्षा लागि' भट्टाचार्य्ये कराइला रन्धन ।
तबे महाप्रभु हासि' बलिला वचन ॥ १७६ ॥

भिक्षा लागि'—भोजन के लिए; **भट्टाचार्य्ये**—बलभद्र भट्टाचार्य को; **कराइला रन्धन**—पकाने के लिए काम में लगाया; **तबे**—उस समय; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **हासि'**—मुस्कुराकर; **बलिला वचन**—ये वचन कहे।

अनुवाद

उसने बलभद्र भट्टाचार्य से कहा कि महाप्रभु का भोजन पकायें। उस समय महाप्रभु ने हँसते हुए ये वचन कहे।

''पुरी-गोसाञि तोमार घरे कर्याछेन भिक्षा ।
मोरे तुमि भिक्षा देह,——एइ मोर 'शिक्षा''' ॥ १७७॥

"पुरी-गोसाञि तोमार घरे कर्याछेन भिक्षा ।
मोरे तुमि भिक्षा देह,——एइ मोर 'शिक्षा'" ॥ १७७॥

पुरी-गोसाञि—माधवेन्द्र पुरी ने; **तोमार घरे**—आपके घर पर; **कर्याछेन भिक्षा**—भोजन करना स्वीकार किया; **मोरे**—मेरे लिए; **तुमि भिक्षा देह**—आपका भोजन पकाना बेहतर है; **एइ**—यही; **मोर शिक्षा**—मेरा आदेश है।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा, "माधवेन्द्र पुरी आपके स्थान पर पहले ही भोजन कर चुके हैं। अतः आप भोजन बनाकर मुझे दे सकते हैं। यह मेरा आदेश है।"

यद् यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः ।
स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते ॥ १७८॥

यद् यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः ।
स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते ॥ १७८॥

यत् यत्—जैसा भी; **आचरति**—करता है; **श्रेष्ठः**—श्रेष्ठ पुरुष; **तत् तत्**—वही; **एव**—निश्चित रूप से; **इतरः**—साधारण; **जनः**—लोग; **सः**—वह; **यत्**—जो कुछ; **प्रमाणम्**—प्रमाण; **कुरुते**—करता है; **लोकः**—लोग; **तत्**—वही; **अनुवर्तते**—पालन करते हैं।

अनुवाद

"'महापुरुष जो भी कर्म करता है, सामान्यजन उसका अनुसरण करते हैं। और वह अपने आदर्श कार्यों से जो भी मानदण्ड स्थापित करता है, सारा जगत् उसका अनुगमन करता है।'"

तात्पर्य

यह उद्धरण *भगवद्गीता* (३.२१) का है।

यद्यपि 'सनोड़िया' हय सेइत ब्राह्मण ।
सनोड़िया-घरे सन्न्यासी ना करे भोजन ॥ १७९॥

यद्यपि 'सनोड़िया' हय सेइत ब्राह्मण ।
सनोड़िया-घरे सन्न्यासी ना करे भोजन ॥ १७९ ॥

यद्यपि—यद्यपि; **सनोड़िया**—सनोड़िया ब्राह्मण संप्रदाय; **हय**—था; **सेइत**—वह; **ब्राह्मण**—ब्राह्मण; **सनोड़िया-घरे**—किसी सनोड़िया (सुनार) के घर में; **सन्न्यासी**—संन्यासी; **ना करे भोजन**—भोजन नहीं करता।

अनुवाद

वह ब्राह्मण सनोड़िया जाति का ब्राह्मण था और संन्यासी ऐसे ब्राह्मण के घर भोजन नहीं करता।

तात्पर्य

उत्तर पश्चिमी भारत में वैश्यों के अनेक उपविभाग पाये जाते हैं। श्रील भक्तिविनोद ठाकुर लिखते हैं कि वैश्यजन आगरवाला, कालवार तथा सानवाड़ में विभाजित हैं। इनमें से आगरवाला उच्चकोटि के वैश्य हैं और कालवार तथा सानवाड़ अपने पेशों के कारण निम्न माने जाते हैं। कालवार तो शराब तथा अन्य मादक वस्तुएँ पीते हैं और वैश्य होने पर भी निम्न वर्ग के माने जाते हैं। कालवार तथा सानवाड़ वैश्यों के पुरोहित सनोड़िया ब्राह्मण कहलाते हैं। श्रील भक्तिविनोद ठाकुर कहते हैं कि बंगाल में सानोयाड़ शब्द सुवर्ण-वणिक का सूचक है। बंगाल में ऐसे पुरोहित हैं, जो इस सुवर्ण-वणिक जाति का मार्गदर्शन करते हैं। यह जाति भी निम्न मानी जाती है। सानवाड़ तथा सुवर्णवणिक में अधिक अन्तर नहीं है। सामान्यतया सुवर्णवणिक बैंकर होते हैं, जो सोने तथा चाँदी का व्यापार करते हैं। पश्चिमी भारत में आगरवाला भी यही काम करते हैं। सुवर्णवणिक या आगरवाला जाति का यह मौलिक व्यापार है। ऐतिहासिक दृष्टि से आगरवाला अयोध नामक प्रदेश से आये और सुवर्णवणिक भी वहीं से आये। अत: ऐसा प्रतीत होता है कि आगरवाला तथा सुवर्णवणिक एक ही जाति के हैं। सनोड़िया ब्राह्मण कालवार तथा सानवाड़ जाति के पुरोहित थे। इसलिए वे निम्न जाति के ब्राह्मण माने जाते थे और संन्यासियों को उनसे भिक्षा या भोजन लेना मना है। किन्तु श्री चैतन्य महाप्रभु ने उस सनोड़िया ब्राह्मण का पकाया भोजन स्वीकार कर लिया, क्योंकि वह माधवेन्द्र पुरी सम्प्रदाय से था। श्रील माधवेन्द्र पुरी, ईश्वर पुरी के गुरु थे और ईश्वर पुरी श्री

चैतन्य महाप्रभु के गुरु थे। इस तरह भौतिक उच्चता या निम्नता का भेदभाव बरते बिना आध्यात्मिक स्तर पर आध्यात्मिक सम्बन्ध स्थापित हो जाता है।

তথাপি পুরী দেখি' তাঁর 'বৈষ্ণব'-আচার ।
'শিষ্য' করি' তাঁর ভিক্ষা কৈল অঙ্গীকার ॥ ১৮০॥

তথাপি পুরী দেখি' তাঁর 'বৈষ্ণব'-আচার ।
'শিষ্য' করি' তাঁর ভিক্ষা কৈল অঙ্গীকার ॥ ১৮০॥

तथापि—फिर भी; **पुरी**—माधवेन्द्र पुरी; **देखि'**—देखकर; **ताँर**—ब्राह्मण का; **वैष्णव-आचार**—वैष्णव की भाँति व्यवहार; **शिष्य करि'**—शिष्य बनाकर; **ताँर भिक्षा**—उसके द्वारा दिया भोजन; **कैल अङ्गीकार**—स्वीकार किया।

अनुवाद

यद्यपि वह ब्राह्मण सनोड़िया जाति का था, किन्तु श्रील माधवेन्द्र पुरी ने देखा कि उसका आचरण वैष्णव जैसा है, इसलिए उन्होंने उसे अपना शिष्य बना लिया। माधवेन्द्र पुरी ने उसका पकाया भोजन भी ग्रहण किया था।

মহাপ্রভু তাঁরে যদি 'ভিক্ষা' মাগিল ।
দৈন্য করি' সেই বিপ্র কহিতে লাগিল ॥ ১৮১॥

মহাপ্রভু তাঁরে যদি 'ভিক্ষা' মাগিল ।
দৈন্য করি' সেই বিপ্র কহিতে লাগিল ॥ ১৮১॥

महाप्रभु—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **ताँरे**—उससे; **यदि**—जब; **भिक्षा मागिल**—भोजन माँगा; **दैन्य करि'**—दीनता के कारण; **सेइ विप्र**—वह ब्राह्मण; **कहिते लागिल**—कहने लगा।

अनुवाद

इसलिए श्री चैतन्य महाप्रभु ने स्वेच्छा से उस ब्राह्मण से भोजन माँगा और वह ब्राह्मण स्वाभाविक दैन्य का अनुभव करते हुए इस प्रकार बोला।

তোমারে 'ভিক্ষা' দিব——বড় ভাগ্য সে আমার ।
তুমি——ঈশ্বর, নাহি তোমার বিধি-ব্যবহার ॥ ১৮২॥

तोमारे 'भिक्षा' दिब——बड़ भाग्य से आमार ।
तुमि——ईश्वर, नाहि तोमार विधि-व्यवहार ॥ १८२ ॥

तोमारे—आपको; **भिक्षा दिब**—मैं भोजन दूँगा; **बड़ भाग्य**—महान् सौभाग्य; **से**—वह; **आमार**—मेरा; **तुमि**—आप; **ईश्वर**—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् हो; **नाहि**—नहीं है; **तोमार**—आपके लिए; **विधि-व्यवहार**—नियमों के अन्तर्गत व्यवहार।

अनुवाद

"आपको भोजन देने में मेरा महान् सौभाग्य है। आप परम भगवान् हैं और दिव्य पद पर होने के कारण आप पर किसी प्रकार का प्रतिबन्ध नहीं है।

'मूर्ख' लोक करिबेक तोमार निन्दन ।
सहिते ना पारिमु सेइ 'दुष्टे'र वचन ॥ १८३ ॥
'मूर्ख'-लोक करिबेक तोमार निन्दन ।
सहिते ना पारिमु सेइ 'दुष्टे'र वचन ॥ १८३ ॥

मूर्ख-लोक—मूर्ख लोग; **करिबेक**—करेंगे; **तोमार निन्दन**—आपकी निन्दा; **सहिते ना पारिमु**—मैं सहन नहीं कर सकूँगा; **सेइ**—उन; **दुष्टेर वचन**—दुष्टों के शब्द।

अनुवाद

"मूर्ख लोग आपकी निन्दा करेंगे, किन्तु मैं ऐसे दुष्ट लोगों के वचन सहन नहीं कर सकूँगा।"

तात्पर्य

श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर कहते हैं कि यद्यपि वह ब्राह्मण उच्च जाति का नहीं था, फिर भी उसने तथाकथित जात-ब्राह्मणों की निडर होकर भर्त्सना की, क्योंकि वह शुद्ध भक्ति-पद पर अवस्थित था। कुछ लोग श्री चैतन्य महाप्रभु का इसलिए विरोध करते हैं, क्योंकि उन्होंने निम्न जाति के वैष्णव को अंगीकार किया। ऐसे लोग महाप्रसाद को दिव्य नहीं मानते; इसीलिए इन्हें यहाँ मूर्ख तथा दुष्ट कहा गया है। शुद्ध भक्त में ऐसे उच्च जाति के लोगों को ललकारने की शक्ति होती है और उसकी साहसिक उक्तियों को गर्वयुक्त नहीं मानना चाहिए। उसे तो स्पष्ट वक्ता मानना चाहिए। ऐसा व्यक्ति उच्च जाति के ऐसे ब्राह्मण की चापलूसी नहीं करता, जो अ-वैष्णव हो।

प्रभु कहे,—श्रुति, स्मृति, यत ऋषि-गण ।
सबे 'एक'-मत नहे, भिन्न भिन्न धर्म ॥ १८४॥

प्रभु कहे,—श्रुति, स्मृति, यत ऋषि-गण ।
सबे 'एक'-मत नहे, भिन्न भिन्न धर्म ॥१८४॥

प्रभु कहे—श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा; **श्रुति**—वेद; **स्मृति**—पुराण; **यत**—सब; **ऋषि-गण**—ऋषि गण; **सबे**—वे सब; **एक-मत नहे**—सहमत नहीं; **भिन्न भिन्न धर्म**—भिन्न धार्मिक संप्रदाय।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने उत्तर दिया, "वेद, पुराण तथा ऋषिगण सदैव आपस में सहमत नहीं होते। फलतः धर्म के भिन्न भिन्न सिद्धान्त पाये जाते हैं।

तात्पर्य

परम सत्य तक पहुँचे बिना एक-मत होना सम्भव नहीं है। *नासावृषिर्यस्य मतं न भिन्नम्*—कहा जाता है कि कोई विद्वान या ऋषि तब तक बड़ा नहीं होता, जब तक वह दूसरे विद्वान से भिन्न मत न रखे। भौतिक स्तर पर एकता की सम्भावना नहीं रहती, इसीलिए विभिन्न प्रकार की धार्मिक प्रणालियाँ हैं। किन्तु परम सत्य एक है और जब कोई परम सत्य को प्राप्त हुआ रहता है, तब मतभेद नहीं रहता। उस परम पद पर पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् पूजनीय होते हैं। जैसाकि *भगवद्गीता* (१८.५५) में कहा गया है— *भक्त्या मामभिजानाति यावान् यश्चास्मि तत्त्वतः।* परम पद के स्तर पर अर्चाविग्रह एक होता है और पूजा-विधि भी एक होती है। यही विधि भक्ति है।

विश्वभर में अनेक धर्म हैं, क्योंकि वे सब भक्ति के परम पद पर आसीन नहीं हैं। जैसाकि *भगवद्गीता* (१८.६६) में स्थपित हुआ है— *सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज। एकम्* का अर्थ है "एक"—कृष्ण। इस पद पर विभिन्न धार्मिक प्रणालियाँ नहीं हैं। *श्रीमद्भागवत* (१.१.२) के अनुसार *धर्मः प्रोज्झितकैतवोऽत्र।* भौतिक स्तर पर धार्मिक प्रणालियाँ भिन्न हैं। *श्रीमद्भागवत* प्रारम्भ से ही इन्हें *धर्मः कैतवः*—ठगने वाला धर्म कहता है। इनमें से कोई भी धर्म वास्तव में शुद्ध तथा मौलिक नहीं है। वास्तविक धर्म तो वह है, जो मनुष्य

को पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् का प्रेमी बनाता हो। *श्रीमद्भागवत* (१.२.६) के शब्दों में :

स वै पुंसां परो धर्मो यतो भक्तिरधोक्षजे।
अहैतुक्यप्रतिहता ययात्मा सुप्रसीदति॥

"सारी मानवता का परम धर्म वह है, जिससे लोग दिव्य भगवान् की प्रेमाभक्ति प्राप्त कर सकें। ऐसी भक्ति बिना किसी स्वार्थ के तथा बिना किसी अवरोध के होनी चाहिए, जिससे आत्मा पूरी तरह तुष्ट हो सके।"

इस स्तर पर भगवान् की सेवा के अतिरिक्त अन्य कुछ भी नहीं होता। जब मनुष्य का कोई छिपा स्वार्थ नहीं होता, तब सिद्धान्तों में एकता तथा सहमति होती है। चूँकि हर एक का शरीर तथा मन भिन्न है, अतएव नाना प्रकार के धर्मों की आवश्यकता होती है। किन्तु आध्यात्मिक पद प्राप्त कर लेने पर शारीरिक तथा मानसिक अन्तर नहीं रह जाते। फलतः परम पद पर धर्म में ऐक्य होता है।

धर्म-स्थापन-हेतु साधुर व्यवहार ।
पूरी-गोसाञिर ये आचरण, सेइ धर्म सार ॥ १८५॥

धर्म-स्थापन-हेतु साधुर व्यवहार ।
पुरी-गोसाञिर ये आचरण, सेइ धर्म सार ॥ १८५॥

धर्म-स्थापन-हेतु—धर्म की स्थापना के लिए; **साधुर व्यवहार**—भक्त का व्यवहार; **पुरी-गोसाञिर**—माधवेन्द्र पुरी का; **ये आचरण**—जो व्यवहार; **सेइ**—वह; **धर्म सार**—सारे धर्म का सार।

अनुवाद

"भक्त के आचरण से धर्म के वास्तविक प्रयोजन की स्थापना होती है। माधवेन्द्र पुरी गोस्वामी का आचरण ऐसे धर्मों का सार है।"

तात्पर्य

श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर ने इस श्लोक पर अपनी निम्नलिखित टीका दी है। *साधु* व्यक्ति *महाजन* या *महात्मा* कहलाता है। *भगवद्गीता* (९.१३) में महात्मा की परिभाषा भगवान् कृष्ण द्वारा इस प्रकार दी गई है :

महात्मानस्तु मां पार्थ दैवीं प्रकृतिमाश्रिताः ।
भजन्त्यनन्यमनसो ज्ञात्वा भूतादिमव्ययम् ॥

"हे पार्थ, जो भ्रमित नहीं हैं, ऐसे महात्मा दैवी प्रकृति के संरक्षण में रहते हैं। वे पूर्णतया भक्ति में संलग्न रहते हैं, क्योंकि वे मुझे आदि तथा अव्यय पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के रूप में जानते हैं।"

भौतिक जगत् में विभिन्न मतावलम्बियों द्वारा *महात्मा* शब्द का अर्थ भिन्न-भिन्न रूपों में ग्रहण किया जाता है। संसारी भी अपना पृथक् दृष्टिकोण रखते हैं। इन्द्रियतृप्ति में लगे रहने वाले बद्धजीव के लिए महाजन की मान्यता उसके द्वारा दी जाने वाली इन्द्रियतृप्ति के अनुपात के अनुसार होती है। उदाहरणार्थ, एक व्यापारी किसी बैंकर (साहूकार) को *महाजन* मान सकता है और भौतिक भोग की कामना रखने वाले कर्मीजन जैमिनि जैसे दार्शनिक को महाजन मान सकते हैं। ऐसे कई योगी हैं, जो इन्द्रियों पर नियन्त्रण चाहते हैं; उनके लिए पतंजलि ऋषि महाजन हैं। ज्ञानियों के लिए नास्तिक कपिल, वशिष्ठ, दुर्वासा, दत्तात्रेय तथा अन्य निर्विशेष दार्शनिक महाजन हैं। असुरगण हिरण्याक्ष, हिरण्यकशिपु, रावण, रावण के पुत्र मेघनाद, जरासंघ इत्यादि को महाजन मानते हैं। भौतिकतावादी मानववादियों के लिए, जो शरीर के विकासवाद के मानने वाले हैं, डार्विन जैसा व्यक्ति महाजन है। जो विज्ञानी कृष्ण की बहिरंगा शक्ति से मोहग्रस्त हैं और जिनका पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् से किसी तरह का नाता नहीं है, उन्हें भी कुछ लोग महाजन मानते हैं। इसी प्रकार दार्शनिक, इतिहासकार, साहित्यकार, वक्ता तथा सामाजिक और राजनीतिक नेता भी कभी-कभी महाजन माने जाते हैं। ऐसे महाजनों का आदर कुछ लोगों द्वारा किया जाता है, जिनका वर्णन *श्रीमद्भागवत* (२.३.१९) में हुआ है :

श्वविड्वराहोष्ट्रखरैः संस्तुतः पुरुषः पशुः ।
न यत्कर्णपथोपेतो जातु नाम गदाग्रजः ॥

"ऐसे व्यक्ति जो कुत्तों, सुअरों, ऊँटों तथा गधों की तरह हैं, वे उन लोगों की प्रशंसा करते हैं, जो बुराइयों से उद्धार करने वाले भगवान् श्रीकृष्ण की दिव्य लीलाओं को कभी भी नहीं सुनते।"

इस तरह भौतिकतावादी स्तर पर पशु-प्रवृत्ति वाले नेताओं की पूजा पशुओं द्वारा की जाती है। कभी-कभी वैद्य, मनोरोग-चिकित्सक तथा सामाजिक कार्यकर्ता शारीरिक कष्ट, दु:ख, भय इत्यादि को दूर करने का प्रयास करते हैं, किन्तु उन्हें आध्यात्मिक पहचान का कोई ज्ञान नहीं होता और ईश्वर से उनका कोई सम्बन्ध नहीं रहता। फिर भी मोहग्रस्त लोगों द्वारा वे महाजन माने जाते हैं। आत्मवंचित (खुद को ठगने वाला) व्यक्ति कभी-कभी ऐसे पुरोहित वर्ग से अपना नेता या गुरु चुनते है, जो भौतिक जीवन के नियमों के आधार पर औपचारिक रूप से नियुक्त किया गया हो। इस तरह वे इन औपचारिक पुजारियों द्वारा ठगे जाते हैं। कभी-कभी लोग श्रील वृन्दावन दास ठाकुर द्वारा नामांकित *ढ़ंगविप्र* (धूर्त ब्राह्मण) को महाजन के रूप में स्वीकार करते हैं। ऐसे धूर्त श्रील हरिदास ठाकुर के गुणों की नकल करते हैं और हरिदास ठाकुर से ईर्ष्या करते हैं, जो सचमुच ही महाजन थे। वे नाना प्रकार के बनावटी प्रयास करते हैं, अपने आपको महान् भगवद्भक्त के रूप में या तंत्रविद्या, सम्मोहन विद्या तथा चमत्कार के ज्ञाता योगियों के रूप में प्रचारित करते हैं। कभी-कभी लोग पूतना, तृणावर्त, वत्स, बक, अघासुर तथा धेनुक, कालिय और प्रलम्ब जैसे असुरों को भी पूजनीय मानते हैं। कुछ लोग पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के नकलचियों तथा प्रतिद्वंद्वियों को—यथा पौण्ड्रक, शृगाल वासुदेव, शुक्राचार्य, या चार्वाक जैसे नास्तिकों, राजा वेन, सुगत तथा अर्हत जैसे नास्तिकों को—भी मान्यता प्रदान करते हैं। जो लोग ऐसे नकलचियों का महाजन के रूप में स्वीकार करते हैं, उनकी श्री चैतन्य महाप्रभु में परम भगवान् के रूप में कोई श्रद्धा नहीं रहती। वे ईश्वरविहीन ठगों को मानते हैं, जो अपने आपको ईश्वर का अवतार बताते हैं और वाग्जाल से मूर्ख संसारी लोगों को ठगते हैं। इस तरह न जाने कितने धूर्तों को महाजन मान लिया जाता है।

भक्ति-रहित लोग कभी-कभी भौतिक स्वार्थों वाले व्यक्तियों को गलती से महाजन मान लेते हैं। एकमात्र प्रयोजन कृष्ण-भक्ति होना चाहिए। कभी-कभी सकाम-कर्मी, शुष्क दार्शनिक, अभक्तगण, योगी तथा भौतिक ऐश्वर्य एवं कांचन-कामिनी में आसक्त व्यक्ति महाजन मान लिए जाते हैं। किन्तु ऐसे अनधिकृत महाजनों के विषय में *श्रीमद्भागवत* (६.३.२५) का यह कथन है :

प्रायेण वेद तदिदं न महाजनोऽयं
देव्याविमोहित-मतिर्बत माययालम्।
त्रय्यां जड़ीकृत-मतिर्मधु-पुष्पितायां
वैतानिके महति कर्मणि युज्यमानः॥

इस भौतिक संसार में, सकाम कर्मी उन मूर्खों द्वारा महाजन के रूप में स्वीकार किये जाते हैं, जो भक्ति के मूल्य से अनजान हैं। ऐसे मूर्खों की सांसारिक बुद्धि और मानसिक तर्कवितर्क की विधियाँ भौतिक प्रकृति के तीन गुणों के नियंत्रण में होती हैं। फलस्वरूप वे शुद्ध भक्ति को नहीं समझ सकते। वे भौतिक कार्यकलापों से आकृष्ट होते हैं और वे भौतिक प्रकृति की पूजा करने लगते हैं। इस प्रकार वे सकाम कर्मी के रूप में जाने जाते हैं। यहाँ तक कि वे आध्यात्मिक कार्यकलापों के स्वांग में दिखने वाले भौतिक कार्यकलापों में फँस जाते हैं। *भगवद्गीता* में ऐसे लोगों को *वेद-वाद-रताः* कहा गया है। वे वेदों के वास्तविक अभिप्राय को नहीं समझ पाते; फिर भी वे अपने आपको वेदों के अधिकारी मानते हैं। वैदिक ज्ञान को समझने वाले लोगों को कृष्ण को पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के रूप में जानना चाहिए। *वेदैश्च सर्वैरहम् एव वेद्यः।* (*भगवद्गीता* १५.१५)

इस भौतिक जगत् में कोई कर्म-वीर के रूप में, कोई धर्म-वीर के रूप में तो कोई ज्ञान-वीर के रूप में या त्याग-वीर के रूप में विख्यात हो सकता है। कुछ भी हो, इस विषय में *श्रीमद्भागवत* (३.२३.५६) का निम्नलिखित मत है :

नेह यत्कर्म धर्माय न विरागाय कल्पते।
न तीर्थपदसेवायै जीवन्नपि मृतो हि सः॥

"जिसके कार्य धार्मिक जीवन में प्रगति करने हेतु नहीं हैं, जिसके धार्मिक कर्मकाण्ड उसे वैराग्य में ऊपर उठने में सहायक नहीं हैं तथा जिसका वैराग्य उसे पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् की भक्ति की ओर ले जाने में सहायक नहीं होते, उसे मृत ही समझना चाहिए, भले ही वह श्वास ले रहा हो।"

निष्कर्ष यह है कि सारे पुण्यकर्म, सकाम कर्म, धार्मिक सिद्धान्त तथा वैराग्य को अन्ततोगत्वा भक्ति की ओर ले जाने वाला होना चाहिए। सेवा करने

की विभिन्न विधियाँ हैं। मनुष्य अपने देश, समाज, वर्णाश्रम धर्म, बीमार, गरीब, धनी, स्त्री, देवता इत्यादि की सेवा कर सकता है। यह सब इन्द्रियतृप्ति या भौतिक भोग के अन्तर्गत आता है। यह बड़े ही दुर्भाग्य की बात है कि लोग ऐसे भौतिक कार्यों की ओर आकृष्ट होते हैं और इन कार्यों से जुड़े नेताओं को महाजन अर्थात् महान् आदर्श नेता के रूप में स्वीकार किया जाता है। वास्तव में वे केवल भ्रमित करने वाले नेता हैं, किन्तु सामान्य व्यक्ति यह नहीं समझ पाता कि उसे किस तरह भ्रमित किया जा रहा है।

नरोत्तम दास ठाकुर का कहना है—*साधु-शास्त्र-गुरु-वाक्य, चित्तेते करिया ऐक्य।* "मनुष्य को साधुओं, शास्त्रों और गुरु के शब्दों को अपने मार्गदर्शक के रूप में स्वीकार करना चाहिए।" श्री चैतन्य महाप्रभु जैसा महापुरुष *साधु* है। शास्त्र तो शास्त्रों के आदेश हैं। और गुरु वह है, जो शास्त्रों के आदेशों की पुष्टि करता है। इन तीनों के मार्गदर्शन को स्वीकार करना ही जीवन की वास्तविक प्रगति के लिए महाजनों का सही अर्थों में अनुसरण करना है (*महाजनो येन गतः स पन्थाः*)। मोह से आवृत व्यक्ति को सही रास्ता नहीं सूझता, अतः श्री चैतन्य महाप्रभु कहते हैं—*धर्म-स्थापन-हेतु साधुर व्यवहार।* "भक्त का आचरण अन्य सारे व्यवहारों के लिए आदर्श स्थापित करने वाला होता है।" स्वयं श्री चैतन्य महाप्रभु ने भक्ति के नियमों का पालन किया और दूसरों को भी वैसा ही करने की शिक्षा दी। *पुरी-गोसाञि ये आचरण, सेइ धर्म सार।* श्री चैतन्य महाप्रभु माधवेन्द्र पुरी के आचरण का अनुसरण करते थे और अन्यों को भी उसका पालन करने के लिए कहते थे। दुर्भाग्यवश लोग अनन्त काल से भौतिक शरीर के प्रति आकृष्ट होते रहे हैं।

यस्मात्मबुद्धिः कुणपे त्रिधातुके
स्वधीः कलत्रादिषु भौम इज्य-धीः।
यत्तीर्थबुद्धिः सलिले न कर्हिचि-
ज्जनेष्वभिज्ञेषु स एव गोखरः॥

"जो व्यक्ति तीन तत्त्वों से बने इस शरीर को आत्मा मानता है और शरीर के उपफलों को अपने सम्बन्धी मानता है, जो अपनी जन्मभूमि को पूज्य मानता है और जो तीर्थस्थानों में दिव्य ज्ञान वाले व्यक्तियों से भेंट करने के स्थान पर

स्नान करने के उद्देश्य से जाता है, उसे गधे या गाय के समान समझना चाहिए।" (*भागवत* १०.८४.१३) जो लोग *गड्डालिका-प्रवाह न्याय* को मानते हैं और छद्म महाजनों के पदचिह्नों पर चलते हैं, वे माया की तरंगों द्वारा बहा ले जाये जाते हैं। इसीलिए भक्तिविनोद ठाकुर सतर्क करते हैं :

मिछे मायार वशे, याच्छ भेसे'
खाच्छ हाबुडुबु, भाइ।
जीव कृष्ण-दास, ए विश्वास,
करले त' आर दुःख नाइ॥

"माया की तरंगों में मत बहो। केवल भगवान् कृष्ण के चरणकमलों की शरण ग्रहण करो, तो सारे दुःख समाप्त हो जायेंगे।" जो लोग सामाजिक रीति-रिवाज तथा आचरण का पालन करते हैं, वे महाजनों द्वारा बताये गये पथ का अनुसरण करना भूल जाते हैं—इस तरह वे महाजनों के चरणकमलों के प्रति अपराधी बनते हैं। कभी-कभी वे ऐसे महाजनों को अत्यधिक रुढ़िवादी मानते हैं या फिर अपने खुद के महाजन उत्पन्न कर लेते हैं। इस तरह वे परम्परा प्रणाली की अवहेलना करते हैं। यह सबके लिए बड़ा दुर्भाग्य है। प्रामाणिक महाजन के चरणचिह्नों पर नहीं चलने से सुख की सारी योजनाएँ व्यर्थ हो जाएँगी। *मध्यलीला* (२५.५५, ५६, ५८) में इसका वर्णन हुआ है :

परम कारण ईश्वरे केह नाहि माने।
स्व--स्व-मत स्थापे पर-मतेर खण्डने॥
ताते छय दर्शन हैते 'तत्त्व' नाहि जानि।
'महाजन' येइ कहे, सेइ सत्य मानि॥
श्रीकृष्ण-चैतन्य-वाणी—अमृतेर धार।
तिंहो ये कहये वस्तु, सेइ 'तत्त्व'—सार॥

लोग इतने अभागे हैं कि वे पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के आदेशों को नहीं मानते। उल्टे वे तथाकथित महाजनों से समर्थन प्राप्त करते हैं। *ताते छय दर्शन हैते 'तत्त्व' नाहि जानि*—केवल तर्कवादियों का अनुसरण करके वास्तविक सत्य को नहीं जाना जा सकता। हमें गुरु-शिष्य परम्परा के अन्तर्गत महाजनों के चरणचिह्नों का अनुसरण करना होगा। तभी हमारा प्रयास सफल होगा।

श्रीकृष्ण-चैतन्य-वाणी-अमृतेर धार—"श्री चैतन्य महाप्रभु द्वारा कहा गया प्रत्येक शब्द अमृत का सतत प्रवाह है।" जो भी उनके शब्दों को यथार्थ सत्य के रूप में स्वीकार करता है, वही परम सत्य के सार को समझ सकता है।

सांख्य दर्शन या पतंजलि की योग प्रणाली के द्वारा परम सत्य का निर्धारण नहीं किया जा सकता, क्योंकि सांख्य या पतंजलि के अनुयायी योगी विष्णु को भगवान् नहीं मानते (*न ते विदुः स्वार्थगतिं हि विष्णुम्*)। ऐसे लोगों की आकांक्षा कभी पूरी नहीं होती, इसीलिए वे बहिरंगा शक्ति द्वारा आकर्षित होते हैं। ज्ञानी लोग भले ही सारे विश्व में विख्यात हों, किन्तु वास्तव में वे अधिकृत सत्ता होते नहीं। ऐसे नेता स्वयं कट्टरपंथी होते हैं—तनिक भी उदार नहीं होते। किन्तु यदि हम इस दर्शन का प्रचार करें, तो लोग वैष्णवों को साम्प्रदायिक कहेंगे। श्रील माधवेन्द्र पुरी वास्तविक महाजन थे, किन्तु पथभ्रष्ट लोग सत्य-असत्य का भेद नहीं कर पाते। किन्तु जो कृष्णभावनाभावित है, वह भगवान् तथा उनके भक्तों द्वारा बनाये गये वास्तविक धार्मिक पथ को समझ जाते हैं। श्री माधवेन्द्र पुरी सच्चे महाजन थे, क्योंकि वे परम सत्य को सही ढंग से समझते थे और जीवन-भर शुद्ध भक्त जैसा आचरण करते रहे। श्री चैतन्य महाप्रभु ने श्री माधवेन्द्र पुरी की विधि का समर्थन किया है। इसीलिए यद्यपि भौतिक दृष्टि से सनोड़िया ब्राह्मण निम्न पद था, फिर भी श्री चैतन्य महाप्रभु ने उसे आत्म-साक्षात्कार के सर्वोच्च पद पर अवस्थित माना।

श्रीमद्भागवत (६.३.२०) में बारह महाजनों का उल्लेख है—ब्रह्मा, नारद, शम्भु, चार कुमार, कपिल, मनु, प्रह्लाद, जनक, भीष्म, बलि, शुकदेव तथा यमराज।

गौड़ीय सम्प्रदाय में अपने महाजनों का चुनाव करने के लिए हमें श्री चैतन्य महाप्रभु तथा उनके प्रतिनिधियों का अनुसरण करना होगा। उनके अगले प्रतिनिधि हैं श्री स्वरूप दामोदर गोस्वामी। फिर आते हैं, छः गोस्वामी—श्री रूप, श्री सनातन, भट्ट रघुनाथ, श्री जीव, गोपाल भट्ट तथा दास रघुनाथ। विष्णु स्वामी के अनुयायी श्रीधर स्वामी थे, जो *श्रीमद्भागवत* के सुविख्यात भाष्यकार हैं। वे भी महाजन थे। इसी प्रकार चण्डीदास, विद्यापति तथा जयदेव भी महाजन थे। जो व्यक्ति नकली गुरु बनने के लिए महाजनों की नकल करता

है, वह महाजनों के पदचिह्नों पर चलने से कोसों दूर रहता है। कभी-कभी लोग वास्तव में यह नहीं समझ पाते कि एक महाजन अन्य महाजनों का अनुसरण कैसे करता है। इस तरह लोग अपराध करते हैं और भक्ति से विलग हो जाते हैं।

तर्कोऽप्रतिष्ठः श्रुतयो विभिन्ना
नासावृषिर्यस्य मतं न भिन्नम् ।
धर्मस्य तत्त्वं निहितं गुहायां
महाजनो येन गतः स पन्थाः ॥ १८६॥

तर्कोऽप्रतिष्ठः श्रुतयो विभिन्ना
नासावृषिर्यस्य मतं न भिन्नम् ।
धर्मस्य तत्त्वं निहितं गुहायां
महाजनो येन गतः स पन्थाः ॥ १८६॥

तर्कः—शुष्क तर्क; **अप्रतिष्ठः**—अनिर्णित; **श्रुतयः**—वेद; **विभिन्नाः**—विभिन्न मतों वाले; **न**—नहीं; **असौ**—वह; **ऋषिः**—ऋषि; **यस्य**—जिसका; **मतम्**—विचार; **न**—नहीं; **भिन्नम्**—अलग; **धर्मस्य**—धार्मिक सिद्धान्तों का; **तत्त्वम्**—तत्त्व; **निहितम्**—बसा हुआ है; **गुहायाम्**—सिद्ध भक्त के हृदय में; **महा-जनः**—स्वरूपसिद्ध पूर्ववर्ती आचार्य; **येन**—जिस रीति से; **गतः**—कार्य किया; **सः**—वह; **पन्थाः**—शुद्ध पवित्र मार्ग।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने आगे कहा, "'शुष्क तर्क में निर्णय का अभाव होता है। जिस महापुरुष का मत अन्यों से भिन्न नहीं होता, उसे महान् ऋषि नहीं माना जाता। केवल विभिन्न वेदों के अध्ययन से कोई सही मार्ग पर नहीं आ सकता, जिससे धार्मिक सिद्धान्तों को समझा जाता है। धार्मिक सिद्धान्तों का ठोस सत्य शुद्ध स्वरूपसिद्ध व्यक्ति के हृदय में छिपा रहता है। फलस्वरूप, जैसाकि सारे शास्त्र पुष्टि करते हैं, मनुष्य को महाजनों द्वारा बतलाये गये प्रगतिशील पथ पर ही चलना चाहिए।'"

तात्पर्य

यह श्लोक *महाभारत, वनपर्व* (३१३.११७) से लिया गया है, जिसे युधिष्ठिर महाराज ने कहा था।

তবে সেই বিপ্র প্রভুকে ভিক্ষা করাইল ।
মথু-পুরীর লোক সব প্রভুকে দেখিতে আইল ॥ ১৮৭॥

তবে সেই বিপ্র প্রভুকে ভিক্ষা করাইল ।
মথু-পুরীর লোক সব প্রভুকে দেখিতে আইল ॥ ১৮৭॥

তবে—तत्पश्चात्; **सेइ विप्र**—वही ब्राह्मण; **प्रभुके**—श्री चैतन्य महाप्रभु को; **भिक्षा कराइल**—भोजन परोसा; **मथु-पुरीर**—मथुरा के; **लोक**—सामान्य लोग; **सब**—सब; **प्रभुके**—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **देखिते आइल**—दर्शन करने आये।

अनुवाद

इस वार्ता के बाद ब्राह्मण श्री चैतन्य ने महाप्रभु को भोजन कराया। फिर मथुरा के सारे निवासी महाप्रभु का दर्शन करने आये।

লক্ষ-সঙ্খ্য লোক আইসে, নাহিক গণন ।
বাহির হঞা প্রভু দিল দরশন ॥ ১৮৮॥

লক্ষ-সঙ্খ্য লোক আইসে, নাহিক গণন ।
বাহির হঞা প্রভু দিল দরশন ॥ ১৮৮॥

লক্ষ-সঙ্খ্য—लाखों की संख्या में; **লোক আইসে**—लोग आये; **নাহিক গণন**—उनकी गिनती नहीं; **বাহির হঞা**—बाहर आकर; **প্রভু**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **দিল দরশন**—दर्शन दिया।

अनुवाद

लोग लाखों की संख्या में आये, जिनकी गणना कोई नहीं कर सकता था। अतः श्री चैतन्य महाप्रभु लोगों को दर्शन देने के लिए घर से बाहर आये।

বাহু তুলি' বলে প্রভু 'হরি-বোল'-ধ্বনি ।
প্রেমে মত্ত নাচে লোক করি' হরি-ধ্বনি ॥ ১৮৯॥

বাহু তুলি' বলে প্রভু 'হরি-বোল'-ধ্বনি ।
প্রেমে মত্ত নাচে লোক করি' হরি-ধ্বনি ॥ ১৮৯॥

বাহু তুলি'—भुजाएँ ऊपर उठाकर; **বলে**—कहा; **প্রভু**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **হরি-বোল-ধ্বনি**—"हरि बोल" की दिव्य ध्वनि; **প্রেমে**—प्रेम में; **মত্ত**—उन्मत्त होकर; **নাচে**—नाचे; **লোক**—लोग; **করি' হরি-ধ্বনি**—दिव्य ध्वनि "हरि" बोलकर।

अनुवाद

जब लोग एकत्र हो गये, तो श्री चैतन्य महाप्रभु ने अपने हाथ उठाकर जोर से कहा, "हरि बोल!" लोगों ने महाप्रभु के साथ नामोच्चारण किया और प्रेमाविष्ट हो गये। वे उन्मत्त की तरह नाचने तथा "हरि!" की दिव्य ध्वनि का उच्चारण करने लगे।

यमुनार 'चब्बिश घाटे' प्रभु कैल स्नान ।
सेइ विप्र प्रभुके देखाय तीर्थ-स्थान ॥१९०॥

यमुनार 'चब्बिश घाटे' प्रभु कैल स्नान ।
सेइ विप्र प्रभुके देखाय तीर्थ-स्थान ॥१९०॥

यमुनार—यमुना नदी के; **चब्बिश घाटे**—चौबीस घाटों पर; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **कैल**—किया; **स्नान**—स्नान; **सेइ विप्र**—उस ब्राह्मण ने; **प्रभुके**—श्री चैतन्य महाप्रभु को; **देखाय**—दिखाए; **तीर्थ-स्थान**—तीर्थ स्थान।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने यमुना नदी के किनारे के चौबीस घाटों में स्नान किया और उस ब्राह्मण ने उन्हें सारे तीर्थस्थान दिखलाये।

तात्पर्य

यमुना के तट के चौबीस घाट (स्नान करने के स्थान) इस प्रकार हैं—(१) अविमुक्त, (२) अधिरूढ़, (३) गुह्यतीर्थ, (४) प्रयागतीर्थ, (५) कनखलतीर्थ, (६) तिन्दुक, (७) सूर्यतीर्थ, (८) वटस्वामी, (९) ध्रुवघाट, (१०) ऋषितीर्थ, (११) मोक्षतीर्थ, (१२) बोधतीर्थ, (१३) गोकर्ण, (१४) कृष्णगंगा, (१५) वैकुण्ठ, (१६) असिकुण्ड, (१७) चतु:सामुद्रिककूप, (१८) अक्रूरतीर्थ, (१९) याज्ञिकविप्रस्थान, (२०) कुब्जाकूप, (२१) रंगस्थल, (२२) मंचस्थल, (२३) मल्लयुद्ध स्थान तथा (२४) दशाश्वमेध।

स्वयम्भु, विश्राम, दीर्घ-विष्णु, भूतेश्वर ।
महाविद्या, गोकर्णादि देखिला विस्तर ॥१९१॥

स्वयम्भु, विश्राम, दीर्घ-विष्णु, भूतेश्वर ।
महाविद्या, गोकर्णादि देखिला विस्तर ॥ १९१ ॥

स्वयम्भु—स्वयंभु; **विश्राम**—विश्राम; **दीर्घ-विष्णु**—दीर्घ विष्णु; **भूतेश्वर**—भूतेश्वर; **महाविद्या**—महाविद्या; **गोकर्ण**—गोकर्ण; **आदि**—आदि; **देखिला**—देखे; **विस्तर**—बहुत से।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने यमुना नदी के तट पर स्थित सारे तीर्थस्थानों को देखा, जिनमें स्वयम्भु, विश्रामघाट, दीर्घ विष्णु, भूतेश्वर, महाविद्या तथा गोकर्ण सम्मिलित हैं।

'वन' देखिवारे यदि प्रभुर मन हैल ।
सेइत ब्राह्मणे प्रभु सङ्गेते लइल ॥ १९२ ॥
'वन' देखिबारे यदि प्रभुर मन हैल ।
सेइत ब्राह्मणे प्रभु सङ्गेते लइल ॥ १९२ ॥

वन—वन; **देखिबारे**—देखने के लिए; **यदि**—जब; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु का; **मन**—मन; **हैल**—हुआ; **सेइत**—निस्सन्देह, उस; **ब्राह्मणे**—ब्राह्मण को; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **सङ्गेते लइल**—अपने साथ ले गये।

अनुवाद

जब श्री चैतन्य महाप्रभु को वृन्दावन के विविध वनों को देखने की इच्छा हुई, तो उन्होंने उसी ब्राह्मण को अपने साथ ले लिया।

मधु-वन, ताल, कुमुद, बहुला-वन गेला ।
ताहाँ ताहाँ स्नान करि' प्रेमाविष्ट हैला ॥ १९३ ॥
मधु-वन, ताल, कुमुद, बहुला-वन गेला ।
ताहाँ ताहाँ स्नान करि' प्रेमाविष्ट हैला ॥ १९३ ॥

मधु-वन—मधुवन; **ताल**—तालवन; **कुमुद**—कुमुदवन; **बहुला-वन**—बहुलावन; **गेला**—उन्होंने देखा; **ताहाँ ताहाँ**—यहाँ वहाँ; **स्नान करि'**—स्नान करके; **प्रेम-आविष्ट हैला**—प्रेमाविष्ट हो गये।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने विभिन्न वन देखे, जिनमें मधुवन, तालवन, कुमुदवन तथा बहुलावन सम्मिलित हैं। वे जहाँ जहाँ गये, उन्होंने अत्यन्त प्रेमपूर्वक स्नान किया।

तात्पर्य

वन शब्द का अर्थ है "जंगल।" वृन्दावन उस जंगल का नाम है, जहाँ श्रीमती वृन्दादेवी (तुलसी देवी) प्रचुरता में उगती हैं। वास्तव में यह वैसा जंगल नहीं है, जैसाकि हम घनी हरी वनस्पति से समझते हैं। वृन्दावन में ऐसे बारह वन हैं। कुछ यमुना नदी के पश्चिम में स्थित हैं और कुछ पूर्व की ओर। पूर्व की ओर के वनों में भद्रवन, बिल्ववन, लौहवन, भाण्डीरवन तथा महावन हैं, जबकि पश्चिम की ओर के वनों के नाम हैं मधुवन, तालवन, कुमुदवन, बहुलावन, काम्यवन, खदिरवन तथा वृन्दावन। वृन्दावन क्षेत्र के ये बारह वन हैं।

পথে গাভী-ঘটা চরে প্রভুরে দেখিয়া ।
প্রভুকে বেড়য় আসি' হুঙ্কার করিয়া ॥ ১৯৪॥

पथे गाभी-घटा चरे प्रभुरे देखिया ।
प्रभुके बेड़य आसि' हुङ्कार करिया ॥ १९४॥

पथे—पथ में; **गाभी-घटा**—गौओं के झुण्ड; **चरे**—चर रहे; **प्रभुरे देखिया**—श्री चैतन्य महाप्रभु को देखने के बाद; **प्रभुके बेड़य**—उन्होंने महाप्रभु को घेर लिया; **आसि'**—आकर; **हुँ-कार करिया**—रंभाने लगीं।

अनुवाद

जब श्री चैतन्य महाप्रभु वृन्दावन से होकर जा रहे थे, तब चरती हुई गौवों के झुंड ने उन्हें जाते हुए देखा। वे तुरन्त उन्हें घेरकर उच्च स्वर से रँभाने लगीं।

গাভী দেখি' স্তব্ধ প্রভু প্রেমের তরঙ্গে ।
বাৎসল্যে গাভী প্রভুর চাটে সব-অঙ্গে ॥ ১৯৫॥

गाभी देखि' स्तब्ध प्रभु प्रेमेर तरङ्गे ।
वात्सल्ये गाभी प्रभुर चाटे सब-अङ्गे ॥ १९५ ॥

गाभी देखि'—गौओं को देखकर; **स्तब्ध**—स्तब्ध हो गये; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **प्रेमेर तरङ्गे**—प्रेम की तरंगों में; **वात्सल्ये**—अति स्नेह के कारण; **गाभी**—सभी गौएं; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **चाटे**—चाटने लगी; **सब-अङ्गे**—सारे शरीर पर।

अनुवाद

झुंड को पास आते देखकर महाप्रभु प्रेमवश स्तब्ध रह गये। तब गौएं बड़े ही वात्सल्य से उनके शरीर को चाटने लगीं।

सुस्थ हञा प्रभु करे अङ्ग-कण्डूयन ।
प्रभु-सङ्गे चले, नाहि छाड़े धेनु-गण ॥ १९६ ॥
सुस्थ हञा प्रभु करे अङ्ग-कण्डूयन ।
प्रभु-सङ्गे चले, नाहि छाड़े धेनु-गण ॥ १९६ ॥

सुस्थ हञा—शान्त होकर; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **करे**—किया; **अङ्ग**—शरीर का; **कण्डूयन**—सहलाया; **प्रभु-सङ्गे**—श्री चैतन्य महाप्रभु के साथ; **चले**—गईं; **नाहि छाड़े**—नहीं छोड़ती थीं; **धेनु-गण**—सभी गौएँ।

अनुवाद

स्वस्थचित्त होकर श्री चैतन्य महाप्रभु गौओं को सहलाने लगे और गौएं भी उनका साथ न छोड़ पाने के कारण उन्हीं के साथ-साथ चलने लगीं।

कष्टे-सृष्ट्ये धेनु सब राखिल गोयाल ।
प्रभु-कण्ठ-ध्वनि शुनि' आइसे मृगी-पाल ॥ १९७ ॥
कष्टे-सृष्ट्ये धेनु सब राखिल गोयाल ।
प्रभु-कण्ठ-ध्वनि शुनि' आइसे मृगी-पाल ॥ १९७ ॥

कष्टे-सृष्ट्ये—अत्यन्त कठिनाई से; **धेनु**—गौओं को; **सब**—सब; **राखिल**—पीछे रखा; **गोयाल**—ग्वालों ने; **प्रभु-कण्ठ-ध्वनि**—श्री चैतन्य महाप्रभु की संगीतमय ध्वनि; **शुनि'**—सुनकर; **आइसे**—आ गये; **मृगी-पाल**—हिरणों के झुण्ड।

अनुवाद

ग्वाले बड़ी कठिनाई से अपनी गौएं संभाल पाये। फिर जब महाप्रभु ने कीर्तन किया, तो उनकी मधुर ध्वनि सुनकर सारे हिरन उनके पास आ गये।

मृग-मृगी मुख देखि' प्रभु-अङ्ग चाटे ।
भय नाहि करे, सङ्गे याय वाटे-वाटे ॥ १९८ ॥

मृग-मृगी मुख देखि' प्रभु-अङ्ग चाटे ।
भय नाहि करे, सङ्गे याय वाटे-वाटे ॥ १९८ ॥

मृग-मृगी—हिरण और हिरणियाँ; **मुख देखि'**—उनका मुख देखकर; **प्रभु-अङ्ग चाटे**—महाप्रभु के शरीर को चाटने लगे; **भय नाहि करे**—उन्हें जरा भी भय नहीं लगता था; **सङ्गे याय**—उनके साथ गये; **वाटे-वाटे**—सारे मार्ग में।

अनुवाद

जब हिरनों तथा हिरनियों ने आकर महाप्रभु का मुख देखा, तो वे उनका शरीर चाटने लगे। उनसे तनिक भी भयभीत हुए बिना वे उनके साथ-साथ रास्ते में चलने लगे।

शुक, पिक, भृङ्ग प्रभुरे देखि' 'पञ्चम' गाय ।
शिखि-गण नृत्य करि' प्रभु-आगे याय ॥ १९९ ॥

शुक, पिक, भृङ्ग प्रभुरे देखि' 'पञ्चम' गाय ।
शिखि-गण नृत्य करि' प्रभु-आगे याय ॥ १९९ ॥

शुक—तोते; **पिक**—कोयलें; **भृङ्ग**—भौंरे; **प्रभुरे**—श्री चैतन्य महाप्रभु को; **देखि'**—देखकर; **पञ्चम**—पंचम स्वर में; **गाय**—गाने लगे; **शिखि-गण**—मोर; **नृत्य**—नृत्य; **करि'**—करके; **प्रभु-आगे**—श्री चैतन्य महाप्रभु के आगे; **याय**—जाने लगे।

अनुवाद

भौंरे तथा तोता और कोयल जैसे पक्षी पंचम स्वर में गाने लगे तथा मोर महाप्रभु के आगे नाचने लगे।

প্রভু দেখি' বৃন্দাবনের বৃক্ষ-লতা-গণে ।
অঙ্কুর পুলক, মধু-অশ্রু বরিষণে ॥২০০॥

প্রভু দেখি' বৃন্দাবনের বৃক্ষ-লতা-গণে ।
অঙ্কুর পুলক, মধু-অশ্রু বরিষণে ॥ ২০০॥

প্রভু—শ্রী চৈতন্য মহাপ্রভু को; **দেখি'**—देखकर; **বৃন্দাবনের**—वृन्दावन के; **বৃক্ষ-লতা-গণে**—वृक्ष और लताएँ; **অঙ্কুর**—शाखाएँ; **পুলক**—पुलकित होकर; **মধু-অশ্রু**—मधु (शहद) के अश्रु; **বরিষণে**—बरसाने लगे।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु को देखकर वृन्दावन के वृक्ष तथा लताएँ सब प्रफुल्लित हो उठे। उनकी टहनियाँ खड़ी हो गईं और वे मधु के रूप में प्रेम के आँसू बहाने लगे।

ফুল-ফল ভরি' ডাল পড়ে প্রভু-পায় ।
বন্ধু দেখি' বন্ধু যেন 'ভেট' লঞা যায় ॥২০১॥

ফুল-ফল ভরি' ডাল পড়ে প্রভু-পায় ।
বন্ধু দেখি' বন্ধু য়েন 'ভেট' লঞা য়ায় ॥ ২০১॥

ফুল-ফল ভরি'—फूल और फूलों से लदी; **ডাল**—डालें (शाखाएँ); **পড়ে**—गिर गईं; **প্রভু-পায়**—महाप्रभु के चरणकमलों पर; **বন্ধু দেখি'**—एक मित्र को देखकर; **বন্ধু**—दूसरा मित्र; **য়েন**—जैसे; **ভেট**—एक भेंट; **লঞা**—लेकर; **য়ায়**—जाता है।

अनुवाद

फूल-फल से लदे वृक्ष तथा लताएँ महाप्रभु के चरणों पर गिरकर नाना प्रकार की भेंटों से उनका स्वागत करने लगीं, मानो उनके मित्र हों।

প্রভু দেখি' বৃন্দাবনের স্থাবর-জঙ্গম ।
আনন্দিত—বন্ধু যেন দেখে বন্ধু-গণ ॥২০২॥

প্রভু দেখি' বৃন্দাবনের স্থাবর-জঙ্গম ।
আনন্দিত—বন্ধু য়েন দেখে বন্ধু-গণ ॥ ২০২॥

প্রভু দেখি'—महाप्रभु को देखकर; **বৃন্দাবনের**—वृन्दावन के; **স্থাবর-জঙ্গম**—चर-

अचर सभी जीव; **आनन्दित**—प्रसन्न होकर; **बन्धु**—मित्र; **ग्रेन**—जैसे; **देखे**—देखकर; **बन्धु-गण**—मित्र गण।

अनुवाद

इस तरह वृन्दावन के सारे चर तथा अचर प्राणी महाप्रभु को देखकर परम हर्षित हुए। ऐसा लग रहा था मानों मित्रगण अपने अन्य मित्र को देखकर प्रसन्न हुए हों।

তা-সবার প্রীতি দেখি' প্রভু ভাবাবেশে ।
সবা-সনে ক্রীড়া করে হঞা তার বশে ॥২০৩॥

তা-সবার প্রীতি দেখি' প্রভু ভাবাবেশে ।
সবা-সনে ক্রীড়া করে হঞা তার বশে ॥ ২০৩ ॥

তা-সবার—उन सबका; **প্রীতি**—प्रेम; **দেখি'**—देखकर; **প্রভু**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **ভাব-আবেশে**—भावावेश में आकर; **সবা-সনে**—सबके साथ; **ক্রীড়া**—खेल; **করে**—करने लगे; **হঞা**—होकर; **তার**—उनके; **বশে**—वश में।

अनुवाद

उनके स्नेह को देखकर महाप्रभु प्रेमाविष्ट हो गये। वे उनसे उसी तरह खेलने लगे, जिस तरह मित्र एक दूसरे के साथ खेलते हैं। इस तरह वे स्वेच्छा से अपने मित्रों के वशीभूत हो गये।

প্রতি বৃক্ষ-লতা প্রভু করেন আলিঙ্গন ।
পুষ্পাদি ধ্যানে করেন কৃষ্ণে সমর্পণ ॥২০৪॥

প্রতি বৃক্ষ-লতা প্রভু করেন আলিঙ্গন ।
পুষ্পাদি ধ্যানে করেন কৃষ্ণে সমর্পণ ॥ ২০৪ ॥

প্রতি—प्रत्येक; **বৃক্ষ-লতা**—वृक्ष और लता को; **প্রভু**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **করেন আলিঙ্গন**—आलिंगन करने लगे; **পুষ্প-আদি**—सभी पुष्पों तथा फलों आदि; **ধ্যানে**—ध्यान में; **করেন**—करने लगे; **কৃষ্ণে**—भगवान् कृष्ण को; **সমর্পণ**—समर्पण।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु हर वृक्ष तथा हर लता को आलिंगन करने लगे और वे बदले में उन्हें अपने फल-फूल समर्पित करने लगे, मानो वे समाधि में हों।

অশ্রু-কম্প-পুলক-প্রেমে শরীর অস্থিরে ।
'কৃষ্ণ' বল, 'কৃষ্ণ' বল——বলে উচ্চৈঃস্বরে ॥২০৫॥

অশ্রু-কম্প-পুলক-প্রেমে শরীর অস্থিরে ।
'কৃষ্ণ' বল, 'কৃষ্ণ' বল——বলে উচ্চৈঃস্বরে ॥ ২০৫ ॥

অশ্রু—অশ্রু; **কম্প**—কঁপন; **পুলক**—পুলক; **প্রেমে**—প্রেমাবেশ में; **শরীর**—सारा शरीर; **অস্থিরে**—अस्थिर; **কৃষ্ণ বল**—"कृष्ण" कहो; **কৃষ্ণ বল**—"कृष्ण" बोलो; **বলে**—महाप्रभु ने कहा; **উচ্চৈঃ-স্বরে**—ऊँची आवाज में।

अनुवाद

महाप्रभु का शरीर चंचल था और उसमें अश्रु, कँपन तथा हर्ष प्रकट हो रहे थे। वे जोर-जोर से "कृष्ण बोल!" "कृष्ण बोल!" कह रहे थे।

স্থাবর-জঙ্গম মিলি' করে কৃষ্ণ-ধ্বনি ।
প্রভুর গম্ভীর-স্বরে যেন প্রতি-ধ্বনি ॥২০৬॥

স্থাবর-জঙ্গম মিলি' করে কৃষ্ণ-ধ্বনি ।
প্রভুর গম্ভীর-স্বরে য়েন প্রতি-ধ্বনি ॥ ২০৬ ॥

স্থাবর-জঙ্গম—सभी जीव, स्थावर और जंगम; **মিলি'**—मिलकर; **করে**—करने लगे; **কৃষ্ণ-ধ্বনি**—"हरे कृष्ण" की ध्वनि; **প্রভুর**—श्री चैतन्य महाप्रभु की; **গম্ভীর-স্বরে**—गम्भीर स्वर में; **য়েন**—जैसे; **প্রতি-ধ্বনি**—प्रति ध्वनि (गूंज)।

अनुवाद

तब सारे चर तथा अचर प्राणी हरे कृष्ण की दिव्य ध्वनि का उच्चारण करने लगे, मानो वे चैतन्य महाप्रभु के गहन स्वर की प्रतिध्वनि कर रहे हों।

মৃগের গলা ধরি' প্রভু করেন রোদনে ।
মৃগের পুলক অঙ্গে, অশ্রু নয়নে ॥২০৭॥

মৃগের গলা ধরি' প্রভু করেন রোদনে ।
মৃগের পুলক অঙ্গে, অশ্রু নয়নে ॥ ২০৭ ॥

মৃগের—हिरन के; **গলা ধরি'**—गले पकड़कर; **প্রভু**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **করেন**—किया; **রোদনে**—रोदन; **মৃগের**—मृगों का; **পুলক অঙ্গে**—पुलकित; **অশ্রু**—अश्रु; **নয়নে**—आँखों में।

अनुवाद

फिर महाप्रभु मृगों को गले लगाकर रोने लगे। उन मृगों के शरीरों से हर्ष प्रकट हो रहा था और नेत्रों में आँसू थे।

वृक्ष-डाले शुक-शारी दिल दरशन ।
ताहा देखि' प्रभुर किछु शुनिते हैल मन ॥२०८॥

वृक्ष-डाले शुक-शारी दिल दरशन ।
ताहा देखि' प्रभुर किछु शुनिते हैल मन ॥ २०८ ॥

वृक्ष-डाले—वृक्ष की एक शाखा पर; **शुक-शारी**—नर और मादा तोतों की जोड़ी; **दिल**—दिया; **दरशन**—दर्शन; **ताहा देखि'**—उसे देखकर; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु का; **किछु**—कुछ; **शुनिते**—सुनने को; **हैल**—हो गया; **मन**—मन।

अनुवाद

जब नर तथा मादा तोता वृक्ष की डाल पर दिखे, तो महाप्रभु उन्हें देखकर उनको बोलते हुए सुनना चाहते थे।

शुक-शारिका प्रभुर हाते उड़ि' पड़े ।
प्रभुके शुनाञा कृष्णेर गुण-श्लोक पड़े ॥२०९॥

शुक-शारिका प्रभुर हाते उड़ि' पड़े ।
प्रभुके शुनाञा कृष्णेर गुण-श्लोक पड़े ॥ २०९ ॥

शुक-शारिका—तोते, नर और मादा; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **हाते**—हाथ पर; **उड़ि'**—उड़कर; **पड़े**—गिर गये; **प्रभुके**—श्री चैतन्य महाप्रभु को ; **शुनाञा**—सुनाने; **कृष्णेर**—भगवान् कृष्ण के; **गुण-श्लोक पड़े**—गुण-श्लोक (दिव्य गुणों) पढ़ने लगे (सुनाने लगे)।

अनुवाद

नर तथा मादा दोनों तोते उड़कर महाप्रभु के हाथ पर बैठ गये और कृष्ण के दिव्य गुणों का गान करने लगे, जिसे महाप्रभु सुनते रहे।

सौन्दर्यं ललनालि-धैर्य-दलनं लीला रमा-स्तम्भिनीम्प
वीर्यं कन्दुकिताद्रि-वर्यमलाः पारे-परार्धं गुणाः ।

শীলং সর্ব-জনানুরঞ্জনমহো যস্যায়মস্মৎপ্রভুর্
বিশ্বং বিশ্ব-জনীন-কীর্তিরবতাৎকৃষ্ণো জগন্মোহনঃ ॥২১০॥

সৌন্দর্য্যং ললনালি-ধৈর্য্য-দলনং লীলা রমা-স্তম্ভিনী
বীর্য্যং কন্দুকিতাদ্রি-বর্য্যমমলাঃ পারে-পরার্ধ্যং গুণাঃ ।
শীলং সর্ব-জনানুরঞ্জনমহো অস্যায়মস্মৎপ্রভুর্
বিশ্বং বিশ্ব-জনীন-কীর্তিরবতাৎকৃষ্ণো জগন্মোহনঃ ॥ ২১০॥

সৌন্দর্য্যম্—শারীরিক সুন্দরতা; **ললনা-আলি**—গোপিয়ों के समूह का; **धैर्य्य**—धैर्य; **दलनम्**—नष्ट करने की; **लीला**—लीला; **रमा**—रमा (लक्ष्मी देवी); **स्तम्भिनी**—चकित करने वाली; **वीर्य्यम्**—शक्ति, बल; **कन्दुकित**—फेंकने के लिए एक छोटी गेंद की भाँति बनाकर; **अद्रि-वर्य्यम्**—महान् पर्वत; **अमलाः**—बिना दाग के; **पारे-परार्धम्**—असीम; **गुणाः**—गुण; **शीलम्**—व्यवहार; **सर्व-जन**—सभी प्रकार के जीव; **अनुरञ्जनम्**—सन्तुष्ट करके; **अहो**—ओह; **अस्य**—जिसका; **अयम्**—यह; **अस्मत्-प्रभुः**—हमारे प्रभु; **विश्वम्**—सारा ब्रह्माण्ड; **विश्व-जनीन**—प्रत्येक के हितार्थ; **कीर्तिः**—जिसकी महिमा; **अवतात्**—वे बनाये रखें; **कृष्णः**—भगवान् कृष्ण; **जगत्-मोहनः**—सारे संसार को आकर्षित करने वाले।

अनुवाद

नर तोता गाने लगा, "पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् कृष्ण का गुणगान ब्रह्माण्ड में हर एक के लिए लाभप्रद है। उनका सौन्दर्य वृन्दावन की गोपियों को मात देने वाला है और उनके धैर्य को दमित करने वाला है। उनकी लीलाएँ लक्ष्मीदेवी को स्तम्भित करने वाली हैं तथा उनका शारीरिक बल गोवर्धन पर्वत को गेंद जैसा छोटा खिलौना बना देता है। उनके निर्मल गुण अनन्त हैं और उनका आचरण सबको तुष्ट करने वाला है। भगवान् कृष्ण सबके लिए आकर्षक हैं। ओह, हमारे प्रभु सारे ब्रह्माण्ड का पालन करें!"

तात्पर्य

यह श्लोक *गोविन्द लीलामृत* (१३.२९) में पाया जाता है।

শুক-মুখে শুনি' তবে কৃষ্ণের বর্ণন ।
শারিকা পড়য়ে তবে রাধিকা-বর্ণন ॥২১১॥

শুক-মুখে শুনি' তবে কৃষ্ণের বর্ণন ।
শারিকা পড়য়ে তবে রাধিকা-বর্ণন ॥ ২১১॥

शुक-मुखे—नर तोते के मुख से; **शुनि'**—सुनकर; **कृष्णेर वर्णन**—भगवान् कृष्ण का वर्णन; **शारिका**—मादा तोता; **पड़ये**—पढ़ती है; **तबे**—तब; **राधिका-वर्णन**—श्रीमती राधारानी का वर्णन।

अनुवाद

नर तोते से भगवान् कृष्ण का वर्णन सुनकर मादा तोता श्रीमती राधारानी का वर्णन करने लगी।

श्री-राधिकायाः प्रिय़ता सु-रूपता
सु-शीलता नर्तन-गान-चातुरी ।
गुणालि-सम्पत्कविता च राजते
जगन्मनो-मोहन-चित्त-मोहिनी ॥२१२॥

श्री-राधिकायाः प्रियता सु-रूपता
सु-शीलता नर्तन-गान-चातुरी ।
गुणालि-सम्पत्कविता च राजते
जगन्मनो-मोहन-चित्त-मोहिनी ॥ २१२॥

श्री-राधिकायाः—श्रीमती राधारानी का; **प्रियता**—प्रेम; **सु-रूपता**—अनुपम सुन्दरता; **सु-शीलता**—सुशील व्यवहार; **नर्तन-गान**—कीर्तन और नृत्य में; **चातुरी**—चातुर्य; **गुण-आलि-सम्पत्**—ऐसे दिव्य गुणों की उपलब्धि; **कविता**—कविता; **च**—और; **राजते**—चमकते हैं; **जगत्-मनः-मोहन**—कृष्ण के, जो अखिल ब्रह्माण्ड के मन को आकर्षित करते हैं; **चित्त-मोहिनी**—मन को आकर्षित करने वाली।

अनुवाद

मादा तोता ने कहा, "श्रीमती राधारानी का स्नेह, उनका अनुपम सौन्दर्य तथा उत्तम आचरण, उनका कलापूर्ण नृत्य तथा गायन और उनकी कविता—सबके सब इतने आकर्षक हैं कि वे उन कृष्ण के मन को भी आकृष्ट कर लेते हैं, जो ब्रह्माण्ड के हर व्यक्ति के मन को आकर्षित करने वाले हैं।"

तात्पर्य

यह श्लोक गोविन्द-लीलामृत (१३.३०) में पाया जाता है।

पुनः शुक कहे,—कृष्ण 'मदन-मोहन' ।
तबे आर श्लोक शुक करिल पठन ॥ २१३ ॥

पुनः शुक कहे,—कृष्ण 'मदन-मोहन' ।
तबे आर श्लोक शुक करिल पठन ॥ २१३ ॥

पुनः—दोबारा; **शुक**—नर तोते ने; **कहे**—कहा; **कृष्ण मदन-मोहन**—कृष्ण कामदेव के मन के विजेता हैं; **तबे**—तत्पश्चात्; **आर**—एक अन्य; **श्लोक**—श्लोक; **शुक**—नर तोते ने; **करिल पठन**—पढ़कर सुनाया।

अनुवाद

तत्पश्चात् नर तोते ने कहा, "कृष्ण तो कामदेव के भी मन को मोहने वाले हैं।" फिर वह दूसरा श्लोक सुनाने लगा।

वंशी-धारी जगन्नारी-चित्त-हारी स शारिके ।
विहारी गोप-नारीभिर्जीयान्मदन-मोहनः ॥ २१४ ॥

वंशी-धारी जगन्नारी-चित्त-हारी स शारिके ।
विहारी गोप-नारीभिर्जीयान्मदन-मोहनः ॥ २१४ ॥

वंशी-धारी—वंशीधारी; **जगत्-नारी**—ब्रह्माण्ड की सभी स्त्रियों के; **चित्त-हारी**—हृदयों को चुरानेवाले हैं; **सः**—वे; **शारिके**—मेरी प्यारी तोती; **विहारी**—भोक्ता; **गोप-नारीभिः**—गोपियों के साथ; **जीयात्**—उनकी महिमा बनी रहे; **मदन**—कामदेव के; **मोहनः**—मोहित करने वाले।

अनुवाद

तब तोते ने कहा, "हे प्रिये शारी! (मादा तोता) श्रीकृष्ण वंशी धारण करने वाले हैं और ब्रह्माण्ड-भर की सारी स्त्रियों के हृदयों को हरने वाले हैं। वे सुन्दर गोपिकाओं के विशेष रूप से भोक्ता हैं और कामदेव को भी मोहने वाले हैं। आओ उनका यशोगान करें!"

तात्पर्य

यह श्लोक भी *गोविन्द-लीलामृत* (१३.३१) में प्राप्य है।

पुनः शारी कहे शुके करि' परिहास ।
ताहा शुनि' प्रभुर हैल विस्मय-प्रेमोल्लास ॥ २१५ ॥

पुनः शारी कहे शुके करि' परिहास ।
ताहा शुनि' प्रभुर हैल विस्मय-प्रेमोल्लास ॥ २१५ ॥

पुनः—दोबारा; **शारी कहे**—मादा तोते ने कहा; **शुके**—नर तोते को; **करि' परिहास**—परिहास में; **ताहा शुनि'**—वह सुनकर; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु को; **हैल**—हो गया; **विस्मय**—विस्मय; **प्रेम-उल्लास**—प्रेम की जागृति।

अनुवाद

तब मादा तोता ने नर तोते से परिहास करते हुए बोलना प्रारम्भ किया और श्री चैतन्य महाप्रभु उसे इस तरह बोलते सुनकर अद्भुत प्रेम से चकित रह गये।

राधा-सङ्गे यदा भाति तदा 'मदन-मोहनः' ।
अन्यथा विश्व-मोहोऽपि स्वयं 'मदन-मोहितः' ॥ २१६ ॥

राधा-सङ्गे यदा भाति तदा 'मदन-मोहनः' ।
अन्यथा विश्व-मोहोऽपि स्वयं 'मदन-मोहितः' ॥ २१६ ॥

राधा-सङ्गे—श्रीमती राधा के संग; **यदा**—जब; **भाति**—चमकते हैं; **तदा**—तब; **मदन-मोहनः**—कामदेव के मन को मोहने वाले; **अन्यथा**—अन्यथा; **विश्व-मोहः**—सारे जगत् को मोहने वाले; **अपि**—यद्यपि; **स्वयम्**—स्वयं; **मदन-मोहितः**—कामदेव से मोह लिये जाते हैं।

अनुवाद

मादा तोता (शारी) ने कहा, "जब श्रीकृष्ण राधारानी के साथ होते हैं, तब वे कामदेव को भी मोहने वाले (मदनमोहन) होते हैं। अन्यथा जब वे अकेले होते हैं, तब वे समस्त ब्रह्माण्ड को मोहने वाले होते हुए भी काम के वशीभूत हो जाते हैं।"

तात्पर्य

यह श्लोक भी *गोविन्द-लीलामृत* (१३.३२) से है।

শুক-শারী উড়ি' পুনঃ গেল বৃক্ষ-ডালে ।
ময়ূরের নৃত্য প্রভু দেখে কুতূহলে ॥ ২১৭ ॥

শুক-শারী উড়ি' পুনঃ গেল বৃক্ষ-ডালে ।
ময়ূরের নৃত্য প্রভু দেখে কুতূহলে ॥ ২১৭ ॥

शुक-शारी—नर तथा मादा तोते; **उड़ि'**—उड़कर; **पुनः**—दोबारा; **गेल**—चले गये; **वृक्ष-डाले**—वृक्ष की डाल पर; **मयूरेर**—मोरों के; **नृत्य**—नृत्य को; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **देखे**—देखने लगे; **कुतूहले**—उत्सुकता से।

अनुवाद

तब नर तथा मादा तोते उड़कर वृक्ष की डाल पर चले गये और श्री चैतन्य महाप्रभु अत्यन्त उत्सुकतापूर्वक मोरों का नृत्य देखने लगे।

ময়ূরের কণ্ঠ দেখি' প্রভুর কৃষ্ণ-স্মৃতি হৈল ।
প্রেমাবেশে মহাপ্রভু ভূমিতে পড়িল ॥২১৮॥

मयूरेर कण्ठ देखि' प्रभुर कृष्ण-स्मृति हैल ।
प्रेमावेशे महाप्रभु भूमिते पड़िल ॥ २१८ ॥

मयूरेर—मोरों के; **कण्ठ**—कंठ; **देखि'**—देखकर; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु को; **कृष्ण-स्मृति**—भगवान् कृष्ण का स्मरण; **हैल**—हो गया; **प्रेम-आवेशे**—प्रेमावेश में; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **भूमिते**—भूमि पर; **पड़िल**—गिर पड़े।

अनुवाद

जब महाप्रभु ने मोरों की नीली गर्दन देखी, तो तुरन्त उनमें कृष्ण की स्मृति जाग उठी और वे प्रेमाविष्ट होकर भूमि पर गिर पड़े।

প্রভুরে মূর্চ্ছিত দেখি' সেই ত ব্রাহ্মণ ।
ভট্টাচার্য-সঙ্গে করে প্রভুর সন্তর্পণ ॥২১৯॥

प्रभुरे मूर्च्छित देखि' सेइ त ब्राह्मण ।
भट्टाचार्य्य-सङ्गे करे प्रभुर सन्तर्पण ॥ २१९ ॥

प्रभुरे—श्री चैतन्य महाप्रभु को; **मूर्च्छित**—मूर्च्छित; **देखि'**—देखकर; **सेइ त ब्राह्मण**—निस्सन्देह वह ब्राह्मण; **भट्टाचार्य्य-सङ्गे**—भट्टाचार्य के साथ; **करे**—करने लगा; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु का; **सन्तर्पण**—संरक्षण।

अनुवाद

जब ब्राह्मण ने देखा कि श्री चैतन्य महाप्रभु मूर्च्छित हो गये हैं, तो उसने तथा बलभद्र भट्टाचार्य ने उनकी देख-रेख की।

আস্তে-ব্যস্তে মহাপ্রভুর লঞা বহির্বাস ।
জল-সেক করে অঙ্গে, বস্ত্রের বাতাস ॥২২০॥

आस्ते-व्यस्ते महाप्रभुर लञा बहिर्वास ।
जल-सेक करे अङ्गे, वस्त्रेर वातास ॥ २२० ॥

आस्ते-व्यस्ते—अत्यन्त शीघ्रता में; **महाप्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु का; **लञा**—लेकर; **बहिर्वास**—बाह्य वस्त्र; **जल-सेक करे**—जल छिड़कने लगा; **अङ्गे**—शरीर पर; **वस्त्रेर वातास**—वस्त्र से पंखा झलने लगा।

अनुवाद

उन्होंने तुरन्त महाप्रभु के शरीर पर पानी छिड़का। फिर उन्होंने महाप्रभु का बाहरी वस्त्र ले लिया और उससे पंखा झलने लगे।

প্রভু-কর্ণে কৃষ্ণ-নাম কহে উচ্চ করি' ।
চেতন পাঞা প্রভু যা'ন গড়াগড়ি ॥২২১॥

प्रभु-कर्णे कृष्ण-नाम कहे उच्च करि' ।
चेतन पाञा प्रभु य्रा'न गड़ागड़ि ॥ २२१ ॥

প্রভু-কর্ণে—श्री चैतन्य महाप्रभु के कान में; **কৃষ্ণ-নাম**—भगवान् कृष्ण के पावन नाम का; **কহে**—कीर्तन करने लगे; **উচ্চ করি'**—ऊँचे स्वर में; **চেতন পাঞা**—चेतना पाकर; **প্রভু**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **য়া'ন**—चले गये; **গড়াগড়ি**—भूमि पर लोटने लगे।

अनुवाद

फिर वे महाप्रभु के कान में कृष्ण-नाम का उच्चारण करने लगे। जब महाप्रभु को चेतना आई, तो वे भूमि पर लोटने लगे।

কণ্টক-দুর্গম বনে অঙ্গ ক্ষত হৈল ।
ভট্টাচার্য কোলে করি' প্রভুরে সুস্থ কৈল ॥২২২॥

कण्टक-दुर्गम वने अङ्ग क्षत हैल ।
भट्टाचार्य्य कोले करि' प्रभुरे सुस्थ कैल ॥ २२२ ॥

কণ্টক-দুর্গম—कांटों के कारण दुर्गम स्थान; **বনে**—वन में; **অঙ্গ**—शरीर; **ক্ষত হৈল**—क्षत हो गया; **ভট্টাচার্য্য**—बलभद्र भट्टाचार्य; **কোলে করি'**—उन्हें अपनी गोद में लेकर; **প্রভুরে**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **সুস্থ কৈল**—शान्त किया।

अनुवाद

जब महाप्रभु भूमि पर लोट रहे थे, तब तीक्ष्ण काँटों से उनका शरीर घायल हो गया। बलभद्र भट्टाचार्य ने गोद में उठाकर उन्हें शान्त किया।

कृष्णावेशे प्रभुर प्रेमे गरगर मन ।
'बोल्' 'बोल्' करि' उठि' करेन नर्तन ॥२२३॥

कृष्णावेशे प्रभुर प्रेमे गरगर मन ।
'बोल्' 'बोल्' करि' उठि' करेन नर्तन ॥ २२३ ॥

कृष्ण-आवेशे—कृष्ण के प्रेमावेश में; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **प्रेमे**—प्रेम से; **गरगर**—विक्षिप्त; **मन**—मन; **बोल् बोल्**—बोल बोल; **करि'**—कहकर; **उठि'**—उठकर; **करेन नर्तन**—नृत्य करने लगे।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु का मन कृष्ण के प्रेम में भ्रमण कर रहा था। वे तुरन्त उठ खड़े हुए और बोले, "कीर्तन करो! कीर्तन करो!" फिर वे स्वयं नाचने लगे।

भट्टाचार्य, सेइ विप्र 'कृष्ण-नाम' गाय ।
नाचिते नाचिते पथे प्रभु चलि' याय ॥२२४॥

भट्टाचार्य, सेइ विप्र 'कृष्ण-नाम' गाय ।
नाचिते नाचिते पथे प्रभु चलि' याय ॥ २२४ ॥

भट्टाचार्य—भट्टाचार्य ने; **सेइ विप्र**—उसी ब्राह्मण ने; **कृष्ण-नाम गाय**—कृष्ण के पावन नाम का कीर्तन किया; **नाचिते नाचिते**—नाचते नाचते; **पथे**—पथ पर; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **चलि' याय**—आगे चलने लगे।

अनुवाद

महाप्रभु का आदेश पाने पर बलभद्र भट्टाचार्य तथा ब्राह्मण दोनों कृष्ण-नाम का कीर्तन करने लगे। तब महाप्रभु नाचते-नाचते मार्ग पर आगे बढ़ने लगे।

प्रभुर प्रेमावेश देखि' ब्राह्मण—विस्मित ।
प्रभुर रक्षा लागि' विप्र हइला चिन्तित ॥२२५॥

प्रभुर प्रेमावेश देखि' ब्राह्मण—विस्मित ।
प्रभुर रक्षा लागि' विप्र हइला चिन्तित ॥ २२५ ॥

प्रभुर—श्री चैतन्य महाप्रभु का; **प्रेम-आवेश**—प्रेमावेश; **देखि'**—देखकर; **ब्राह्मण**—ब्राह्मण; **विस्मित**—चकित हो गया; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु की; **रक्षा लागि'**—रक्षा के लिए; **विप्र**—ब्राह्मण; **हइला**—हो गया; **चिन्तित**—अति चिन्तित।

अनुवाद

वह ब्राह्मण श्री चैतन्य महाप्रभु के प्रेमावेश के भावों को देखकर विस्मित था। फिर वह महाप्रभु को सुरक्षा प्रदान करने के लिए चिन्तित हो उठा।

नीलाचले छिला यैछे प्रेमावेश मन ।
वृन्दावन याइते पथे हैल शत-गुण ॥ २२६ ॥

नीलाचले छिला ग्रैछे प्रेमावेश मन ।
वृन्दावन ग्राइते पथे हैल शत-गुण ॥ २२६ ॥

नीलाचले—जगन्नाथ पुरी में; **छिला**—था; **ग्रैछे**—जितना ; **प्रेम-आवेश मन**—सदैव प्रेमावेश की मन:स्थिति में; **वृन्दावन**—वृन्दावन; **ग्राइते**—जाकर; **पथे**—पथ पर; **हैल**—हो गया; **शत-गुण**—सौ गुना।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु का मन जगन्नाथ पुरी में प्रेमावेश में मग्न था, किन्तु जब वे वृन्दावन के मार्ग से होकर निकल रहे थे, तब वह प्रेम सैंकड़ों गुना बढ़ गया।

सहस्र-गुण प्रेम बाड़े मथुरा दरशने ।
लक्ष-गुण प्रेम बाड़े, भ्रमेन यबे बने ॥ २२७ ॥

सहस्र-गुण प्रेम बाड़े मथुरा दरशने ।
लक्ष-गुण प्रेम बाड़े, भ्रमेन ग्रबे वने ॥ २२७ ॥

सहस्र-गुण—एक हजार गुना; **प्रेम**—प्रेम; **बाड़े**—बढ़ गया; **मथुरा**—मथुरा; **दरशने**—के दर्शन करने से; **लक्ष-गुण**—लाख गुना; **प्रेम बाड़े**—प्रेम बढ़ गया; **भ्रमेन**—भ्रमण किया; **ग्रबे**—जब; **वने**—वृन्दावन के वन में।

अनुवाद

जब महाप्रभु ने मथुरा देखा तो उनका प्रेम हजार गुना बढ़ गया, किन्तु जब वे वृन्दावन के जंगलों में घूम रहे थे, तब वह लाख गुना बढ़ गया।

अन्य-देश प्रेम उछले 'वृन्दावन'-नामे ।
साक्षात्भ्रमये एबे सेइ वृन्दावने ॥२२८॥
प्रेमे गरगर मन रात्रि-दिवसे ।
स्नान-भिक्षादि-निर्वाह करेन अभ्यासे ॥२२९॥

अन्य-देश प्रेम उछले 'वृन्दावन'-नामे ।
साक्षात्भ्रमये एबे सेइ वृन्दावने ॥ २२८ ॥
प्रेमे गरगर मन रात्रि-दिवसे ।
स्नान-भिक्षादि-निर्वाह करेन अभ्यासे ॥ २२९ ॥

अन्य-देश—अन्य देशों में; **प्रेम**—प्रेम; **उछले**—बढ़ता है; **वृन्दावन-नामे**—वृन्दावन के नाम से; **साक्षात्**—साक्षात्; **भ्रमये**—भ्रमण करने लगे; **एबे**—अब; **सेइ वृन्दावने**—उसी वृन्दावन में; **प्रेमे**—प्रेम में; **गरगर**—भटकने लगा; **मन**—मन; **रात्रि-दिवसे**—दिन और रात; **स्नान-भिक्षा-आदि**—स्नान-भोजन आदि; **निर्वाह**—करने पर; **करेन**—करते; **अभ्यासे**—अभ्यास से।

अनुवाद

जब श्री चैतन्य महाप्रभु अन्यत्र थे, तब वृन्दावन का नाम सुनकर ही उनका प्रेम बढ़ जाता था। अब जबकि वे वृन्दावन के जंगल में वास्तव में भ्रमण कर रहे थे, तो उनका मन रात-दिन प्रेम में निमग्न रहता था। वे मात्र अभ्यास के कारण खाते और नहाते थे।

एइ-मत प्रेम——यावज्भ्रमिल 'बार' वन ।
एकत्र लिखिलुँ, सर्वत्र ना याय वर्णन ॥२३०॥

एइ-मत प्रेम——यावत्भ्रमिल 'बार' वन ।
एकत्र लिखिलुँ, सर्वत्र ना याय वर्णन ॥ २३० ॥

एइ-मत—इस प्रकार; **प्रेम**—प्रेम; **यावत्**—जब तक; **भ्रमिल**—वे भ्रमण करते रहे; **बार वन**—वृन्दावन में बारह वनों में; **एकत्र**—एक स्थान पर; **लिखिलुँ**—मैंने लिखा है; **सर्वत्र**—हर जगह; **ना याय वर्णन**—वर्णन नहीं किया जा सकता।

अनुवाद

इस तरह मैंने महाप्रभु के प्रेम का वर्णन किया है, जो वृन्दावन के बारहों वनों में भ्रमण करते समय उन्होंने एक स्थान पर प्रकट किया। सभी स्थानों पर उन्होंने क्या अनुभव किया इसका पूरा-पूरा वर्णन कर पाना असम्भव होगा।

वृन्दावने हैल प्रभुर यतेक प्रेमेर विकार ।
कोटि-ग्रन्थे 'अनन्त' लिखेन ताहार विस्तार ॥२३१॥
वृन्दावने हैल प्रभुर यतेक प्रेमेर विकार ।
कोटि-ग्रन्थे 'अनन्त' लिखेन ताहार विस्तार ॥ २३१ ॥

वृन्दावने—वृन्दावन में; **हैल**—थे; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **यतेक**—इतने; **प्रेमेर विकार**—प्रेम के विकार; **कोटि-ग्रन्थे**—करोड़ों ग्रन्थों में; **अनन्त**—भगवान् अनन्त; **लिखेन**—लिखते हैं; **ताहार**—उनका; **विस्तार**—विस्तार।

अनुवाद

वृन्दावन में श्री चैतन्य महाप्रभु को प्रेम-विकार की जो अनुभूति हुई, उसका विशद वर्णन करने के लिए भगवान् अनन्त लाखों ग्रन्थों की रचना करते हैं।

तबु लिखिवारे नारे तार एक कण ।
उद्देश करिते करि दिग्दरशन ॥२३२॥
तबु लिखिबारे नारे तार एक कण ।
उद्देश करिते करि दिग्दरशन ॥ २३२ ॥

तबु—फिर भी; **लिखिबारे**—लिखना; **नारे**—सम्भव नहीं है; **तार**—उसका; **एक**—एक; **कण**—भाग; **उद्देश**—संकेत; **करिते**—करने के लिए; **करि**—मैं करता हूँ; **दिक्-दरशन**—दिशा निर्देश देना।

अनुवाद

चूँकि भगवान् अनन्त स्वयं इन लीलाओं के एक अंश का भी वर्णन नहीं कर सकते, अतः मैं तो केवल दिशा-निर्देश ही कर रहा हूँ।

जगत्भासिल चैतन्य-लीलार पाथारे ।
याँर यत शक्ति तत पाथारे साँतारे ॥२३३॥

जगत्भासिल चैतन्य-लीलार पाथारे ।
य्याँर य्रत शक्ति तत पाथारे साँतारे ॥ २३३॥

जगत्—सारा जगत्; **भासिल**—डूब गया; **चैतन्य-लीलार**—श्री चैतन्य महाप्रभु की लीलाओं की; **पाथारे**—बाढ़ में; **य्याँर**—जिसकी; **य्रत**—इतनी; **शक्ति**—शक्ति; **तत**—उतना; **पाथारे**—बाढ़ में; **साँतारे**—तैरता है।

अनुवाद

सारा संसार श्री चैतन्य महाप्रभु की लीलाओं की बाढ़ में डूब गया। कोई भी व्यक्ति अपनी शक्ति के अनुसार ही उस जल में तैर सकता है।

श्री-रूप-रघुनाथ-पदे याँर आश ।
चैतन्य-चरितामृत कहे कृष्णदास ॥२३४॥

श्री-रूप-रघुनाथ-पदे य्याँर आश ।
चैतन्य-चरितामृत कहे कृष्णदास ॥ २३४॥

श्री-रूप—श्रील रूप गोस्वामी; **रघुनाथ**—श्रील रघुनाथ दास गोस्वामी; **पदे**—चरणकमलों पर; **य्याँर**—जिसकी; **आश**—आशा; **चैतन्य-चरितामृत**—*चैतन्य चरितामृत* नामक ग्रन्थ; **कहे**—लिखते हैं; **कृष्णदास**—श्री कृष्णदास कविराज गोस्वामी।

अनुवाद

श्री रूप तथा श्री रघुनाथ के चरणकमलों में प्रार्थना करते हुए तथा सदैव उनकी कृपा की आकांक्षा करते हुए मैं कृष्णदास उनके चरणचिह्नों का अनुगमन करता हुआ श्री चैतन्य-चरितामृत कह रहा हूँ।

इस तरह श्रीचैतन्य-चरितामृत मध्यलीला के सत्रहवें अध्याय का भक्तिवेदान्त तात्पर्य पूर्ण हुआ, जिसमें महाप्रभु की वृन्दावन यात्रा का वर्णन हुआ है ।